ईसप की गीत–कथाएं

भाग–1



ईसप की गीत-कथाएं

(भाग-1)

निरंकार देव सेवक

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

प्रथम संस्करण : शक 1979 (1901)
द्वितीय संस्करण शक 1981 (1982)
तृतीय संस्करण : शक 1920 (1999)

ISBN 81-230-0702-7

मूल्य : **45 रुपये**

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित।

विक्रय केन्द्र • प्रकाशन विभाग

- पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली-110001
- सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110001
- हाल नं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054
- कामर्स हाउस, करीम भाई रोड, बालार्ड पायर, मुम्बई-400038
- 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता-700069
- राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई-600090
- बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004
- प्रेस रोड, तिरुअनंतपुरम-695001
- 27/6 राममोहन राय मार्ग, लखनऊ-226001
- राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन्स, हैदराबाद-500004
- 'एफ विंग', प्रथम तल, केंन्द्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर-560034

विक्रय काउंटर • प्रकाशन विभाग

- पत्र सूचना कार्यालय, 80-मालवीय नगर, भोपाल (म.प्र.)-462003
- पत्र सूचना कार्यालय, सी.जी.ओ. काम्पलैक्स, 'ए' विंग, ए.बी.रोड, इंदौर (म.प्र.)
- पत्र सूचना कार्यालय, के-21, नंद निकेतन, मालवीय मार्ग, 'सी' स्कीम जयपुर-302001 (राजस्थान)

AESOP KI GEET KATHAYEN, BHAG-1 (HINDI)
By Nirankar Dev Sevak
टाईपसैटिंग : पैरागान इन्टरप्राइजेज, दरियागज, नई दिल्ली द्वारा।
अरावली प्रिन्टर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा०लि०, W-30, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेस-II, नई दिल्ली-20 द्वारा मुद्रित।

दो शब्द

ईसप यूनान देश का निवासी था और दास था। ईसप का जन्म किस वर्ष हुआ, इसके बारे में ठीक-ठीक मालूम नहीं है। कहते हैं, वह ईसा पूर्व छठी शताब्दी के आरम्भ में यूनान के एक टापू पर रहता था और ईसा पूर्व 564 में इसकी मृत्यु हुई।

उन दिनों यूनान में दास-प्रथा का ज़ोर था। ईसप चूंकि स्वयं दास था, इसलिए उसने इस प्रथा का कड़ा विरोध किया। इसका नतीजा यह हुआ कि उस को अंधेरी काल-कोठरी में डाल दिया गया और तब छोड़ा गया जब वह बहुत बूढ़ा हो चुका था। जब कैदखाने से निकला तो किसी ने उसकी मदद नहीं की। मजबूर होकर ईसप को भीख मांगनी पड़ी। दर-दर भीख मांगते हुए वह बच्चों को कहानियां सुनाता। आगे चलकर यही कहानियां दुनिया भर में प्रसिद्ध हो गई। आज हर देश में ये कहानियां बड़े-चाव से पढ़ी जाती हैं। इन कहानियों में पंचतत्र और हितोपदेश की भांति पशु-पक्षियों की कथाओं के द्वारा अच्छी शिक्षा दी गई है।

श्री निरंकार देव सेवक ने उन्हीं में से कुछ कहानियों को छंदबद्ध किया है। इन्हें दो भागों में छापा जा रहा है। इन गीत-कथाओं की भाषा सीधी और सरल है। हमें विश्वास है ये सभी उम्र के बच्चों को समान रूप से आनन्द देंगी।

विषय-सूची

बाबा ईसप की कथा

किसी समय यूनान देश में
दास-प्रथा का था जब जोर,
दास बाज़ारों में बिकते थे
जैसे गाय, बैल, पशु ढोर ।

बड़े-बड़े धनवान दाम दे उन्हें मोल ले जाते थे,
और काम उनसे मनमाने जो चाहे करवाते थे ।
वे घोड़ों की तरह गाड़ियों तक में जोते जाते थे,
तेज नहीं चल पाते थे तो तड़-तड़ कोड़े खाते थे ।
था बाजार में बिकने वाला एक दास ईसप भी,
पर उसको प्राणों से बढ़कर प्यारी आज़ादी थी ।
उसने एक युवक दासों का दल मज़बूत बनाया,
अपने जोशीले नारों से भू-आकाश गुंजाया ।

"हम भी हैं इन्सान, हमारे
भी तो हाथ-पांव हैं चार,
हम कुत्तों की मौत नहीं हैं
हरगिज मरने को तैयार ।
नहीं सहेंगे अत्याचार
हम लेंगे अपने अधिकार ।"

दासों के दम से चलते थे जिन धनवानों के व्यापार,
यह आज़ादी का विचार वे कैसे कर लेते स्वीकार?
आखिर उन लोगों ने मिलकर दिया कैद में उसको डाल,
गर्म-गर्म लोहे से दाग़ी उसके सब शरीर की खाल ।

एक अंधेरी काल कोठरी
में था अब ईसप का वास,
धूप-हवा, रोशनी न कुछ भी
जा सकती थी उसके पास ।
मन में ही घुट-घुट कर, रह
जाता था उसके मन का जोश,
सर जमीन पर पटक-पटक कर
वह हो जाता था बेहोश ।

गए बीतते इसी तरह से वर्ष-मास, गरमी-बरसात,
भूल गया वह कैसा होता है दिन, क्या होती है रात ।
इस प्रकार दुख सहते-सहते बहुत-बहुत बरसों के बाद,
खुद उसके ही घरवाले भी भूल चुके थे उसकी याद ।
धनवानों ने समझ लिया जब उसे दीन-बूढ़ा-लाचार,
छोड़ दिया बंधन से, उस पर दया दिखा कर किसी प्रकार ।

छूट जेल से आया बाहर
कभी रहा था जो नर-नाहर ।
सीधी सतर कमर अब उसकी
थी झुक कर हो गई कमान,
आंखें देख नहीं सकती थीं
शब्द न सुन सकते थे कान ।
उलझी हुई जटाएं सिर पर
थे सफेद दाढ़ी के बाल,
हाथ-पांव चिड़ियों के पंजे
पड़ी झुर्रियां, पिचके गाल ।
उसके साथी ही अब उसको
देख भाग जाते थे दूर,
धनवानों के डर के मारे
वे भी थे बेबस मजबूर ।

इसीलिए वह हाथ पसारे
लगा मांगने दर-दर भीख,
घर-घर बच्चों को देता था
आशीर्वाद, दुआएं, सीख ।

अक्सर बच्चे उसे देखकर दौड़ चले आते थे,
"बूढ़े बाबा ! कहो कहानी" खड़े-खड़े चिल्लाते थे ।

तब वह उनको नई कहानी
गढ़-गढ़ खूब सुनाता
कभी हंसाता, कभी रुलाता,
गुस्सा कभी दिखाता ।
वही कहानी होते-होते
गई फैलती घर-घर,
कही, सुनाई जाती है अब
फैल गई दुनिया-भर ।
ईसप कर विद्रोह न जिसको
जीते-जी ला पाया,
वह परिवर्तन इन कहानियों
से समाज में आया ।
मैंने उनमें से ही केवल
कुछ कहानियां चुनकर,
छंदबद्ध करके रख दी हैं
इस पुस्तक के अंदर ।

जो चाहे वह इनको पढ़ ले जो चाहे वह गाए,
चरण चूम लूं मैं ईसप के अगर कहीं मिल जाए ।

कौआ और मोर

एक कौए ने देखा कहीं,
जहां था वन में कोई नहीं ;
मोरपंख थे बिखरे पड़े,
सात रंगवाले सुंदर बड़े ।

उसने उन सबको चुन-चुन कर किया इकट्ठा,
और पूंछ में अपनी ऐसे खोंस लिया, था,
वह बिल्कुल बन गया मोर ही सुंदर मनहर,
जो नाचा करता है वन में फैला कर पर ।

खोंस मोरपंख कौआ फिर,
चला शान से ऊंचा कर सिर ।

सब बिरादरी के कौओं का हंसी-मजाक उड़ाता,
उन्हें 'कलूटा कौआ' कह कर खुद को मोर बताता ।
चलते-चलते वह जा पहुचा जहां मोर थे अनगिन,
उनमें से ही चुन ली उसने एक मोरनी साथिन ।
पर मोरों ने उसे गौर से देखा तो पहचाना,
मोर नहीं यह तो है भेष बनाए कौआ काना ।

तब तो वन के सारे मोर,
गुस्से में भर उसकी ओर;
झपटे हो ऐसे नाराज,
जैसे कबूतरी पर बाज़ ।



उन सबने उसको चोंचों से नोच-नोच कर मारा,
घायल वह हो गया, फूट कर बही रक्त की धारा ।

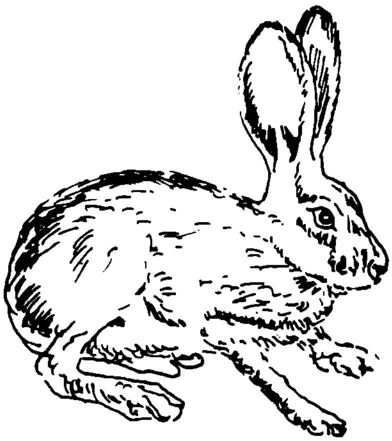
इस प्रकार से गया निकाला,
मोरों में से कौआ काला ।

फिर बिरादरी के कौओं के दल में आया,
किन्तु किसी ने उस पर कुछ तरस न खाया ।
उसे समझ खुदगरज, मतलबी और घमंडी
सबने उसकी जी-भर खूब बुराई ही की ।
नहीं दिया फिर कभी किसी ने उसको आदर-मान,
वह सब में मशहूर गया हो — झूठा-बेईमान ।

जो अपनी बिरादरीवालों
को नीचा दिखलाता;
वह दुनिया में कहीं न आदर,
मान और यश पाता ।

खरगोश और कुत्ता

एक खरहा झाड़ी में जा,
कहीं लुक-छिप कर बैठा था
एक कुत्ते ने आ उसको
दूर से बैठे देखा तो;
झपट कर दौड़ा उसकी ओर,
भौंकता हुआ मचाता शोर ।



खरहा इस फुरती से भागा
निकल वहां से फौरन ।
जैसे वह बन गया हवा हो
सन-सन, सन-सन, सन-सन ।
कुत्ता भागा उसके पीछे
अपनी ताकत-भर तेजी से ।

लेकिन किसी तरह से भी वह उसको पकड़ न पाया ।
आखिर हो निराश वह वापस वहीं घूम फिर आया ।

एक शिकारी बैठा-बैठा
दौड़-भाग वह देख रहा था ।
वह कुत्ते से बोला "वाह रे !
हार गया तू उस खरहे से !



तंदुरुस्त इतना तू, तेरी हट्टी-कट्टी काया ।
फिर भी उस छोटे-से खरहे को तू पकड़ न पाया।"

कुत्ता बोला यह सुन कर
हम दोनों में था अंतर,
जिसे नहीं तुम जान सके
भेद नहीं पहचान सके ।

मैं उसके पीछे भागा था इच्छा से भोजन की ।
वह मुझसे डर कर भागा था चाह लिए जीवन की ।
जो जीने की इच्छा से है बंध कर दौड़ लगाता
खाने की इच्छा से दौड़ा उसको पकड़ न पाता ।

शेर, रीछ और गीदड़

घायल एक हिरन का बच्चा
कहीं एक दिन पड़ा हुआ था ।

उसके ऊपर अपना-अपना करने को अधिकार,
एक शेर में और रीछ में हुई बहुत तकरार ।
दोनों एक-दूसरे से थे बढ़-चढ़ कर बलवान,
था दोनों को अपनी-अपनी ताकत पर अभिमान ।
दोनों लड़ते रहे देर तक लेकिन जीत न हार
हुई किसी की; हुआ न निश्चय किसको मिले शिकार !

गीदड़ एक दूर पर बैठा
यह सब झगड़ा देख रहा था ।
जब उसने देखा लड़ने से
थक कर चूर हुए दोनों वे;
बुरी तरह से घायल होकर
मुरदे-से पड़ गए भूमि पर ।

तभी चतुर गीदड़ दांतों से दाब हिरन का बच्चा,
चलता हुआ वहां से फौरन उन्हें छोड़ कर लड़ता ।



जब कुछ देर बाद दोनों ने देखा नजर उठा कर,
बच्चा नहीं हिरन का पाया; दोनों ने पछता कर —

कहा कि आपस में लड़ने का
मिला हमें यह ठीक नतीजा ।

आपस में दो बड़ी ताकतें जब लड़ने लग जातीं,
छोटी-से-छोटी ताकत भी आ इसका लाभ उठाती ।

बंदर का बच्चा

एक दिन वन-देवता ने
यह कहा सबको सुना के —

"उत्सव आज मनाएंगे हम, सभी जानवर आएं;
और साथ में अपने नन्हें-मुन्नों को भी लाएं ।
जिसका बच्चा सबसे ज्यादा सुंदर पाया जाएगा,
वही जानवर पुरस्कार में बहुत मान-धन पाएगा ।"
सभी जानवर उस जंगल के सुन कर यह ऐलान
अपने-अपने नन्हें-मुन्नें ले आए नादान ।

एक-एक फिर आगे आकर
अपना नन्हा-मुन्ना लाकर ।
लगे देवता को दिखलाने
वंश-रूप, गुण-शील बताने ।

उनमें से हर एक जानवर था यह इच्छा करता,
सबसे बढ़-चढ़ कर हो उसके बच्चे की सुंदरता ।
वहां एक बंदर भी था जो आगे बढ़ कर आया,
चपटी नाक बिना बालों का अपना बच्चा लाया ।
उस बदसूरत बच्चे को जब जानवरों ने देखा,
खिंची मुखों पर उनके अद्‌भुत मुस्कानों की रेखा ।

लगे सभी मुंह बिचकाने,
यह इनाम आया पाने !

कहने लगे — "वाह, ऐसा तो देखा कहीं न रूप
यह सचमुच इनाम पाएगा, इसका रूप अनूप !"



समझ गया बंदर उन सबका यह गहरा हंसी-मजाक !
बोला "तुम सब हंसे देख कर इस बच्चे की नाक ।

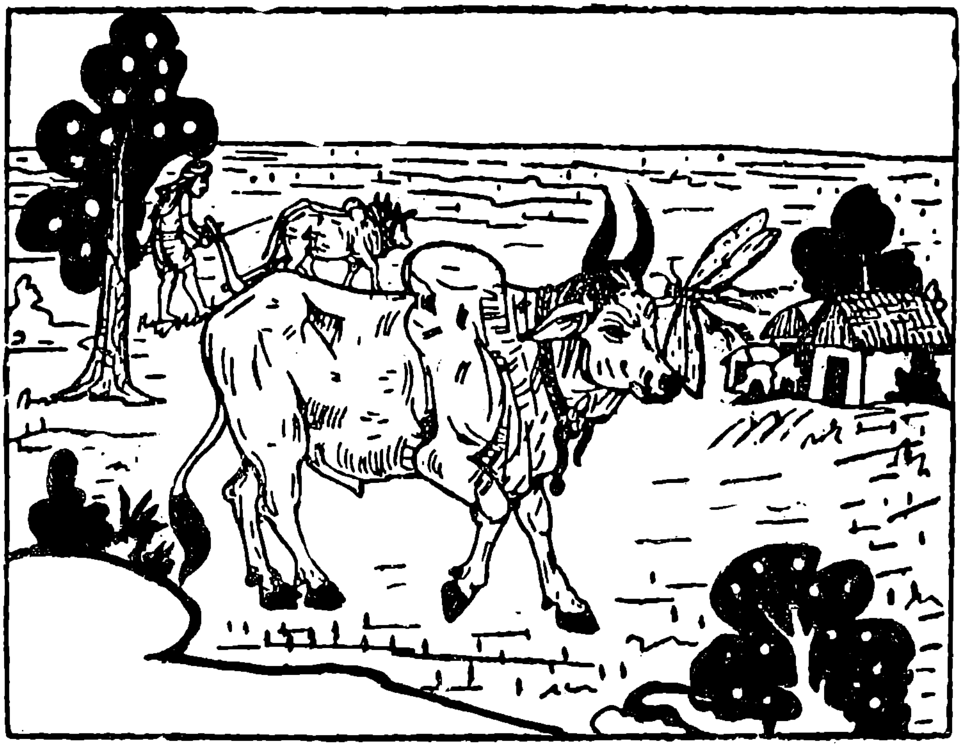
पर तुम शायद नहीं जानते
सबको अपने-अपने बच्चे
सबसे ज्यादा प्यारे लगते,
सुंदर राज-दुलारे लगते ।

वन-देवता न समझें मेरे इस बच्चे को सुंदर,
लेकिन मेरे लिए यही है सब बच्चों से बढ़ कर ।"

मच्छर और बैल

भिन-भिन, भिन-भिन करता मच्छर
एक बैल से बोला आकर—
"तुम लोगों का डील-डौल है
इतना लम्बा-चौड़ा,
फिर भी दास बना रखता है
तुम्हें किसान निगोड़ा ।
दिन-दिन-भर ढोते हो भार,
खाते हो कोड़ों की मार ।
सहते हो सब अत्याचार;
क्यों यह सब तुमको स्वीकार ?
देखो जरा हमारी ओर
हम तुमसे कितने कमजोर ।

किन्तु दुष्ट इंसानों से हम नहीं जरा भी डरते;
पीकर खून हमेशा उनका गुजर बसर हैं करते ।"
कहा बैल ने — "यदि किसान है लेता कस कर काम,
तो बदले में देता भी है खाना और आराम ।
है वर्षा से हमें बचाता, गरमी में ले जा नहलाता ।
जाड़ा हमें न लगने देता, हर दम खबर हमारी लेता ।
अक्सर दे थपथपी पीठ पर करने लगता प्यार ।
इसीलिए उसकी सब बातें हम करते स्वीकार ।"



बात बैल की यह सुन कर
भुन-भुन-भुन बोला मच्छर —

"कहते हो थपथपी जिसे तुम इतनी शान दिखा कर,
उसके एक बार लगते ही मैं तो बस जाता मर ।

मैं क्या करूं प्यार वह लेकर,
छूटूं जिसमें जीवन देकर ।"

मेंढक और सांड़

एक साँड जल की धारा में पानी पीने पहुंचा;
वहीं किनारे पर मेंढक के कुछ बच्चों का दल था ।

उन पर उसके पैर पड़े जब,
गए बेचारे वहीं कुचल सब ।

किसी तरह से बच्चा एक बचा ज्यों-त्यों कर;
अपनी मां के पास कांपता भय से थर-थर ।

वह आकर बोला—"मां ! मां !
एक जानवर बहुत बड़ा ।
आया नदी-किनारे पर
बच्चे सभी चुके हैं मर !
मैं केवल बच पाया हूं
भाग यहां तक आया हूं ।"
मां उसकी सूरत भोली
देख हंसी, हंस कर बोली —

"कितना भारी बड़ा जानवर नदी-किनारे आया ?"
"इतना बड़ा ?" कहा फिर उसने अपना पेट फुलाया ।

बोला मेंढक का बच्चा,
बहुत भला भोला बच्चा —

"इतना बड़ा नहीं वह तो है बहुत बड़ा इससे भी ।"
फूल और भी गई मेंढकी उससे यह सुनते ही ।



फिर बोला मां से बच्चा —
"वह इससे भी बहुत बड़ा !"

इसी तरह से रही मेंढकी अपना पेट फुलाती ।
अपने बच्चे को अचरजमय यह करतब दिखलाती ।

भरी शान में मेंढकी,
नहीं सकी यह देख भी ।
सीमा उसके पेट की,
रही बराबर फूलती ।

और-और यों पेट फुलाते हुए गया फट पेट,
गई मेंढकी पल-भर में हो मर कर लम्बी लेट ।
जो अभिमानी हैं दुनिया में झूठी शान दिखाते,
वे ऐसे ही हंसी-हंसी में बिना मौत मर जाते ।

खाल पहने गधा और गीदड़

एक गधे को कहीं मिल गई एक शेर की खाल,
जिसे पहन वह लगा कूदने पिछले पैर उछाल ।
उसने मन में सोचा, अब मैं जंगल के पशुओं पर,
काफी रौब जमाऊंगा, सब जाएंगे मुझसे डर ।

और घने वन में वह जाकर,
फिरने लगा मस्त इतरा कर ।

चीता, हिरन, लकड़बग्घे सब उसको शेर समझ कर,
आने-जाने लगे सामने से उससे बच-बच कर ।
कभी-कभी वह उन्हें झपट कर और डरा देता था,
उन सबको मीलों अपने से दूर भगा देता था ।

एक बार जब घूम रहा था वन में वह मस्ताना,
उसके पास चला तब आया गीदड़ एक सयाना ।
पर वह नकली शेर देख कर उसे नहीं गुर्राया,
हमला कर देने को केवल अपना कान हिलाया ।

गीदड़ ने बस तभी गधे को लिया ठीक पहचान,
और लगा वह उससे कहने — "अरे गधे नादान !
कोई शेर नहीं बन सकता पहन शेर की खाल,
मेरे ऊपर चल न सकेगी हरगिज तेरी चाल ।



भेस बनाए फिरने वाले,
तन से उजले मन से काले;
देखे हैं मैंने बहुतेरे
हट जा तू आगे से मेरे ।"

खट्टे अंगूर

किसी नगर के बाहर था
एक बगीचा हरा-भरा;
जिसमें एक वृक्ष पर थी
बेल चढ़ी अंगूरों की;
जिसमें काफी ऊंचे पर
लटके थे गुच्छे सुंदर ।

एक बार की बात कि यों ही फिरते मस्त अकेले,
एक सियार आ निकला पथ पर उसी वृक्ष के नीचे ।

उसने ऊपर देखे लटके
अंगूरों के सुंदर गुच्छे ।
हरे और पीले-चमकीले
लगते थे वे बड़े रसीले ।
उन्हें देख कर मन ललचाया
उसके मुंह में पानी आया ।

अपनी ताकत-भर बहुतेरा उछला-कूदा सियार,
तोड़ न पाया किन्तु एक भी गुच्छा किसी प्रकार ।
आखिर बैठ रहा वह थक कर अपनी हिम्मत हार,
कैसे धैर्य बंधाएं मन को बेचारा लाचार

हार कर फिर सोच-विचार
सियार यों कहने लगा पुकार—



"अरे, खट्टे हैं ये अंगूर,
यही है दुनिया का दस्तूर ।
देखने में जो सुंदर-गोल,
समझ लो उसी ढोल में पोल ।"

जो न प्राप्त कर सकते आगे रखे मोहनभोग,
इसी तरह से अपने मन को समझाते वे लोग ।

केकड़ी और उसका बच्चा

एक केकड़ी ने एक दिन
कहा अपने प्रिय बच्चे से —



"क्यों ऐसा टेढ़ा होकर
चलता है तू धरती पर ?
सीधा होकर चलना सीख,
वरना मांगेगा तू भीख ।"

बच्चा बोला — "मां पहले
तू ही चल कर दिखला दे ।
तुझको चलते देखूंगा,

तब मैं तुमसे सीखूंगा
सीधे चलते हैं कैसे !
पहले तू ही चल वैसे।"

बिना किए खुद जो औरों को
कुछ करना सिखलाते हैं;
वे कुछ सिखा न पाते हैं,
उल्टे मुंह की खाते हैं ।

दो मित्र और भालू

थे दो मित्र बहुत ही गहरे; एक प्राण, दो काया
एक-दूसरे की रहते थे हर दम बन कर छाया ।

एक बार बन के रस्ते से
कहीं घूमने जाते थे वे ।

भालू एक किसी झाड़ी से तभी निकल कर आया,
दोनों थर-थर लगे कांपने, ऐसा दिल घबराया ।
एक देखते ही भालू को चढ़ा पेड़ के ऊपर,
बिना विचारे मित्र दूसरा डर से जाएगा मर ।
नीचे जो रह गया मित्र वह सोच न पाया कुछ भी,
मुर्दा बन कर वहीं धरा पर लेट रहा फौरन ही ।

खूब सांस ली उसने खींच
कसकर अपनी आंखें मींच ।

सुन रखा था उसने, भालू मुर्दा कभी न खाता ।
अगर कहीं मिल भी जाए तो, सूंघ अलग हो जाता ।

चढ़ा पेड़ पर था जो साथी,
रहा देखता वह नीचे ही ।
धीरे-धीरे-धीरे चल कर,
भालू आया उसी राह पर ।

मुर्दा बने पड़े साथी को लगा सूंघने आकर,
अपनी नाक को उसके बहुत पास ले जाकर ।

पर वह पड़ा रहा कुछ ऐसे,
सचमुच ही मुर्दा हो जैसे ।



आखिर भालू मोटा-ताजा तगड़ा और जवान,
सूंघ-सूंघ कर छोड़ दिया चल उसको मुर्दा जान ।

जब वह हुआ आंख से ओझल,
हुई पेड़ के ऊपर हलचल ।

चढ़ा पेड़ पर बैठा साथी उतर आ गया नीचे,
देखा, मित्र पड़ा है उसका डर से आंखें मींचे ।

तब उसने यों कहा पुकार
"अब तुम क्यों डरते हो, यार ?

आंखें खोलो, मौत गई टल, भालू यहां कहां है !
यह भी क्या ! तुम मौन पड़े हो, 'हूं' है और न 'हां' है ।

एक बात सच-सच बतला दो,
मन व्याकुल है जो सुनने को ।

भालू तुम्हें देख कर मुंह कुछ बिचका-बना रहा था,
पास तुम्हारे ले जाकर मुंह, कहा कान में क्या था ?''
उठ कर तभी कहा मुर्दा बन पड़ जानेवाले ने —
''भाई, वह भालू तो मुझको यह उपदेश गया दे ।
साथ मुसीबत में जो छोड़, उसको मित्र न समझो;
दिल की बात कहो मत उससे भेद छिपा कर रखो ।
सुख में तो मिल ही जाते हैं सब देने को साथ,
मित्र वही है, जो संकट में भागे छोड़ न साथ ।''



भेड़िया और कुत्ता

एक भेड़िया भूखा-प्यासा
किसी शहर के पास गया आ ।
रात चांदनी थी उजियाली
झिलमिल-झिलमिल तारोंवाली ।
वहां रात में चलते-फिरते
उसकी भेंट हुई कुत्ते से ।
कुत्ते को मोटा-ताजा पा
उससे कहने लगा भेड़िया —

''भाई, मुझे बताओ, ऐसी चीजें तुम क्या खाते,
जिससे तुम फुर्तीले, मोटे-ताजे होते जाते ।
मुझको तो शिकार जंगल में कहीं नहीं मिल पाता,
इसीलिए देखा, मैं कितना दुबला होता जाता ।''
कुत्ता बोला — ''जो-कुछ मैं करता हूं, तुम वैसा ही
किया करो तो तुमको कुछ भी कमी न हो भोजन की ।''

कहा भेड़िए ने — ''बतलाओ,
मेरे संकट-कष्ट मिटाओ ।''

कुत्ता बोला — ''और नहीं कुछ, किसी गृहस्थ के घर
तुम मेरी ही तरह रहो चल, काम नहीं कुछ दिन-भर ।
खाने को भर पेट खिलाएगी तुमको घरवाली
करनी मगर रात में होगी चोरों से रखवाली ।''

कहने लगा भेड़िया — "तुमने यह तो खूब बताया,
मैं अवश्य स्वीकार करूंगा किसी सेठ की छाया ।
जाड़े-वर्षा से जंगल में जो-जो दुख पाता हूं,
हे मेरे सुख-दुख के साथी, तुमको क्या बतलाऊं ।
किसी सेठ के घर का तुम ही पता मुझे बतला दो,
भोजन पका-पकाया छक कर खूब जहां मिलता हो ।"



कुत्ता बोला — "साथ चलो
अभी बताता हूं तुमको ।"
वे दोनों चल दिए वहां से,
थोड़ी दूर राह पर जा के ।

एक चोट का-सा निशान उस कुत्ते की गर्दन पर
दिया भेड़िए को दिखलाई, उसने पूछा रुक कर —

"यह निशान कैसा है, भाई ?
चोट यहां यह कैसे पाई ?"

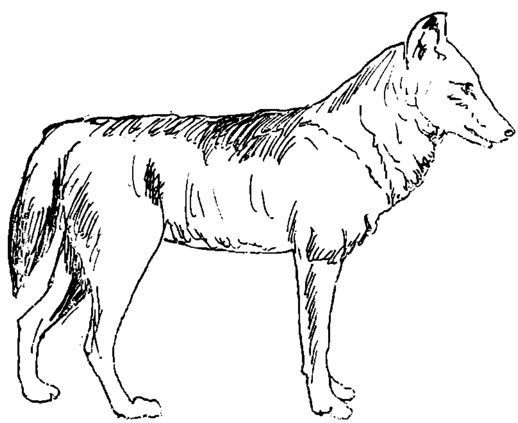
"नहीं चोट का है निशान यह" — कुत्ता बोला हंस कर —
"दिन में मुझे बांध कर रखते हैं सांकल से घर पर ।

यह निशान है उसका ही,
नहीं दर्द है बिल्कुल भी ।"

अचरज से कह उठा भेड़िया — "तो क्या तुम सांकल से
दिन-भर बंधे पड़े रहते हो, नहीं घूम-फिर सकते ?"

कुत्ता कहने लगा कि "हां-हां,
दिन में तो जाता हूं बांधा ।
किन्तु रात में तो आजादी
है मुझको पूरी मिल जाती ।

दिन में सब नौकर-चाकर हैं करते मेरी सेवा
सांकल पकड़ घुमाते अक्सर दूर-दूर तक ले जा ।
कभी-कभी मालिक भी मुझको साथ-साथ ले जाते,
बड़े प्यार से मेरे सिर के ऊपर हाथ फिराते ।"
सुन कुत्ते की बात भेड़िया उल्टे पांवों भागा
कहता हुआ — "मुबारक तुमको यह बंधन सांकल का ।
बंधन में रह राजभोग भी मुझे नहीं स्वीकार,
आजादी से कष्ट उठाना अच्छा है सौ बार ।
किसी मूल्य पर मैं अपने को बेच नहीं सकता हूं,
इससे तो अच्छा है भूखा-प्यासा ही मर जाऊं ।"





चमगादड़

एक बार उड़नेवाले पशु
और गगन के पक्षी,
लड़ने लगे खूब आपस में
खांव-खौंव खी-खी-खी ।
कभी जीत जाता था पशु-दल
और कभी पंछी-दल,
धरती और गगन दोनों पर
मची हुई थी हलचल ।
जीत-हार लेकिन निश्चित थी
नहीं किसी की होती,
कभी एक सेना रोती, थी
कभी दूसरी रोती ।
महायुद्ध में बस चमगादड़
ही ऐसा था जो न कभी लड़ा,
किसी तरफ से, घूम रहा था
कभी इधर आ, कभी उधर जा ।
कभी पक्षियों के दल में था
वह आकर मिल जाता,
और कभी पशुओं में मिल कर
जय-जयकार मनाता ।

पक्षियों से वह कहता था
कि — "देखो यह मेरा डैना,
तुम्हारे ही तो जैसा है
कौन मुझको पशु कहता है ।
गगन में मैं उड़ सकता हूं
न उडते-उडते थकता हूं ।"



और पशुओं के दल में जा
सुना कर उनको कहता था —
"नहीं मैं अंडे देता हूं
मगर बच्चे जन लेता हूं ।
नहीं हूं फिर मैं पशु कैसे
अन्य सारे पशु हैं जैसे ।"
इस चालाकी से अपनी वह
रण में गया न मारा ।

छोड़ उसे वह चल देता था
जब जो भी दल हारा ।
इस प्रकार से लड़ते-लड़ते
महायुद्ध में दोनों दल के,
लाखों वीर गए मारे जब
तब पशु-पक्षी घबराए सब ।

चलने लगे संदेसे फिर तो हुए संधि-प्रस्ताव
युद्ध बंद हो गया परस्पर हुआ प्रेम-सद्भाव ।

किन्तु किसी भी दलवालों ने
चमगादड़ को दल में अपने,
नहीं मिलाया, वह बेचारा
दोनों ओर गया दुत्कारा ।
युद्धकाल में समझ गए थे
सब उसकी चालाकी,
था उस पर विश्वास किसी को
नहीं जरा भी बाकी ।
तबसे ही चमगादड़ अपना
लिए हुए मुंह काला,
इधर-उधर छिपता फिरता है
मिले जहां अंधियाला ।
नहीं उजाले में दिन के वह
कभी सामने आता ।
धोखेबाज प्राणी तबसे ही
चमगादड़ कहलाता ।

गधा गीदड़ और शेर



एक गधे से गीदड़ की
थी मित्रता बहुत गहरी ।
दोनों ने यह सोचा था
अगर कभी कोई विपदा,
किसी एक पर आएगी
दूर नहीं हो पाएगी ।

तो दूसरा मदद कर उसकी दूर करेगा उसको,
अपने ही समान समझेगा उसके भी सुख-दुख को ।
एक बार जंगल में यों ही साथ घूमते जाते,
एक शेर आ गया अचानक उन दोनों के आगे ।

बचने की तरकीब नहीं थी,
मौत सामने नाच रही थी ।

पर गीदड़ चालाक बहुत था पास शेर के आकर
कहने लगा खुशामद से — "हे महाबली, नर-नाहर !
आप कहें तो गधे को उस चक्कर में फांसूं
जिससे निकल न वह जा पाए, और आपको सौंपूं ।"

कहा शेर ने — "अच्छा जा,
मेरे पास गधे को ला ।"
गीदड़ ने धोखा देकर
गधे को उस रस्ते पर,

जान-बूझ कर चला दिया
जिस रस्ते पर गड्ढा था ।
गिरा उसी में गधा, न बाहर
निकल सका वह लाख जतन कर ।

गीदड़ तभी शेर को लेकर पास गधे के आया
और लगा कहने — "लो अपना यह शिकार मन-भाया ।"

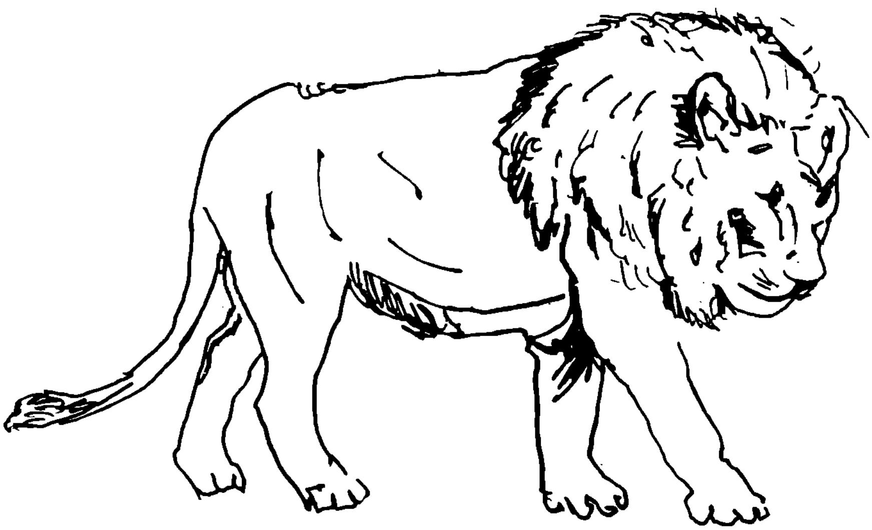


कहा शेर ने मन में अपने
अब तो इस गहरे गड्ढे से,
निकल नहीं यह जा पाएगा
इसको फिर देखा जाएगा ।
गीदड़ को खाऊं मैं पहले
भाग न जा पाए यह जिससे ।

यही सोच कर,
गुस्से में भर,
गीदड़ पहले
चतुर शेर ने

मार गिराया, खाया,
मन में दया न लाया ।

और गधे को छोड़ दिया फिर किसी दूसरे दिन को
जब शिकार का मिल जाना ही जंगल में मुश्किल हो ।
जो औरों के लिए खोदता है दुनिया में खाई,
वह खुद ही मारा जाता है, रीति यही चली आई ।



ह्वेल मच्छ और शेर

एक शेर सागर के तट पर
घूम रहा था मस्ती में भर,
तभी पास में ही लहरों पर
उसने देखा, नजर उठा कर ।
ह्वेल मच्छ ले रहा धूप था
अद्‌भुत उसका रंग-रूप था ।
कहा शेर ने उसे पुकार —
"अरे मछलियों के सरदार !
हुए आज से हम-तुम यार
बोलो है तुमको स्वीकार ?"

ह्वेल मच्छ ने कहा — "वन के पशुओं के राजा,
बड़ी खुशी के साथ कटेंगे अब दिन-रात हमारे ।"
कुछ दिन बाद शेर के ऊपर ऐसी आफत आई,
एक जंगली भैंस से भिड़ उसकी छिड़ी लड़ाई ।

ह्वेल मच्छ से कहा शेर ने —
"हे सुख-दुख के साथी मेरे,
निकल नीर से बाहर आओ
और मदद कर मुझे जिताओ ।"
किन्तु मदद करने की काफी
इच्छा करते रहने पर भी,
यह आ सका न जल से बाहर
वहीं फुदकता रहा बराबर ।

ह्वेल मच्छ की इस हरकत पर शेर हुआ नाराज़
और उसे दी तट पर से ही चिल्ला कर आवाज —

"तू है दगाबाज मक्कार,
नहीं आज से मेरा यार ।"

बात शेर की सुन कर बोले ह्वेल मच्छ महाराज —
"तुम फिज़ूल में ही होते हो मुझ पर यों नाराज़ ।
मेरी सीमाओं को देखो, मेरी ओर निहारो,
मेरी मजबूरी पर खाओ तरस, न यों फटकारो ।
शक्तिमान मैं सबसे ज्यादा हूं पानी के भीतर,
किन्तु नहीं कर सकता कुछ भी मैं आकर पृथ्वी पर ।"
अलग-अलग सीमाओं वाले मित्र नहीं हो सकते,
मिल कर साथ नहीं हंस सकते, साथ नहीं रो सकते ।



घोड़े की छाया

एक मुसाफिर ने दोपहरी की गरमी से ऊब,
घोड़ा लिया किराए पर मोटा-तगड़ा खूब ।

वह उसके ऊपर चढ़ कर
लौट रहा था अपने घर,
करता हुआ पार बंजर
रेगिस्तानी रास्ते पर ।

घोड़े का मालिक भी दाएं-बाएं दौड़ लगाता,
घोड़े की ही तरह तेज़ था उसी राह पर जाता ।
सिर पर सूरज की किरणें थीं बरसाती अंगारे,
घुड़सवार बेचैन गया हो जब गरमी के मारे;

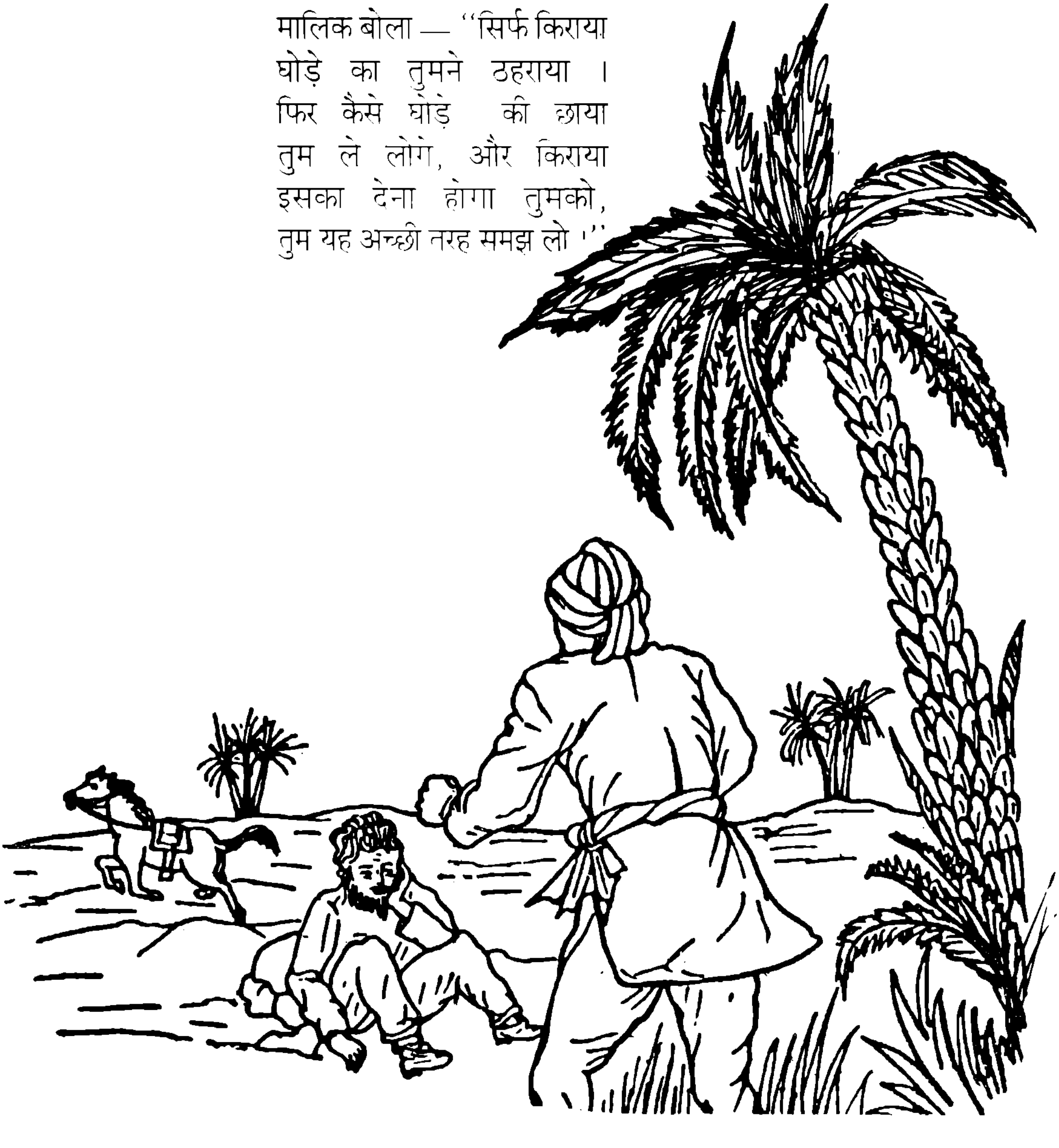
उसने सोचा वहीं ठहर कर,
ले लूं कुछ विश्राम !
किन्तु राह में दूर-दूर तक
था न छांह का नाम ।

चारों ओर पड़ा था मीलों लम्बा रेगिस्तान,
पंछी और परिन्दे तक थे भूले हुए उड़ान ।
घुड़सवार ने सोचा मन में वहीं खड़ा कर घोड़ा,
उसकी छाया में ही ले-ले वह पड़ाव-सुख थोड़ा ।
उसने रोक दिया घोड़े को और पीठ से कूद,
उसकी छाया में आ लेटा पल-भर आंखें मूंद ।

तभी मालिक ने घोड़े के
पास आकर दौड़ते हुए,
कहा — ''यह तुम करते हो क्या,
यहां पर तो मैं लेटूंगा ।''

घुड़सवार ने कहा — ''किराया लोगे तुम भरपूर;
मुझे जरा दम ले लेने दो, मैं हूं थक कर चूर ।''

मालिक बोला — ''सिर्फ किराया
घोड़े का तुमने ठहराया ।
फिर कैसे घोड़े की छाया
तुम ले लोगे, और किराया
इसका देना होगा तुमको,
तुम यह अच्छी तरह समझ लो ।''



घुड़सवार बोला — "छाया तो
अलग न घोड़े से सकती हो,
फिर यह कैसा अलग किराया
मांग रहे तुम छाया का ।"

इसी बात पर उन दोनों में बढ़ी बहुत तकरार,
दोनों लड़ने लगे, गई मच भारी चीख-पुकार ।
उन दोनों की हाथापाई देख गया घोड़ा डर,
भाग पड़ा सीधा सरपट वह अपनी पूंछ उठाकर ।

और न देखा पीछे मुड़ कर,
कौन जिया या कौन गया मर ।

घुड़सवार पछताया, मालिक फूट-फूट कर रोया,
छाया पर लड़ कर दोनों ने घोड़े को भी खोया ।

गड़ा हुआ धन

एक किसान लगा जब मरने,
तब उसने अपने लड़कों से
कहा कि "मैं तो मरता हूं अब,
पर मिल-जुल कर रहना तुम सब ।
एक भेद मैं बतलाता हूं ।
सारा धन रखे जाता हूं ।

अपने उन खेतों में, जिनको अब तक जोता-बोया ।"
बुड्ढे की सुन बात दुखी होकर हर लड़का रोया ।

बुड्ढे के मर जाने पर
लड़कों ने सोचा मिल कर ।

गड़ा हुआ धन खोद निकालें और रईस बन जाएं,
बिना किए कुछ खाएं-पीएं, बैठे मौज उड़ाएं ।
चारों कोने से सबने मिल खेत खोद सब डाले,
उलट-पुलट कर दी मिट्टी, ले खन्ता और कुदालें ।

किन्तु गड़ा धन हाथ न आया,
नहीं किसी ने कुछ भी पाया ।

हो निराश फिर सबने मिल कर पैडी उसमें बोई,
करता रहा निराई कोई, रहा सींचता कोई ।
पिछले सब सालों से अच्छी फसल हुई उस साल,
एक फसल में ही बन बैठे वे सब मालामाल ।



याद उन्हें आई बुड्ढे की तब वह अंतिम बात,
खेतों में रखे जाता हूं मैं अपनी सौगात ।

खेत खोदते नहीं अगर
उस लालच में मेहनत कर,
तो फिर क्या पैदा होता
और उन्हें मिल पाता क्या ?

मेहनत करने वाला ही है गड़ा हुआ धन पाता,
मिट्टी का ढेला भी मेहनत से सोना बन जाता ।

शिकारी और लकड़हारा

एक शिकारी सज-धज वन में करने गया शिकार,
ऊंचे-ऊंचे पेड़ खड़े थे जहां अनेक प्रकार ।
मिला नहीं पशु कोई उसको कहीं दूर तक वन में,
एक लकड़हारा था लकड़ी काट रहा निर्जन में ।
उससे कहने लगा शिकारी देकर अपना परिचय,
रोब जमाता हुआ कि, "मुझको नहीं किसी का भी भय ।

अरे लकड़हारे क्या तूने
कहीं निशान पांव के देखे,
अता-पता लग जाए जिनसे
शेर गया वन में किस रस्ते ?"

देख लकड़हारे ने उससे कहा — "अरे शिकारी,
तू है बड़ा अनाड़ी, मेरी उम्र कटी है सारी ।
पंजों के निशान देखे से शेर नहीं मिल सकता,
दीप देख लेने से केवल कमल कहीं खिल सकता ।
मुझ पर व्यर्थ जमाने आया है तू झूठी शान,
चल मैं तुझको शेर दिखाऊं अभी अरे नादान ।
देख रहा है जो तू आगे उसी मांद में शेर
अगर मारना है तो जल्दी चल, तू मत कर देर ।’



डरा शिकारी यह सुन कर
शेर अगर झपटा मुझ पर ।
तो मुझको खा जाएगा
फौरन मार गिराएगा
नाम शेर का ही सुन कर
लगा कांपने वह थर-थर,
कहने लगा लकड़हारे से —
"मुझे शेर खुद नहीं चाहिए,
मैं तो ढूंढ़ रहा हूं केवल उसके पांव-निशान,
जिससे उसके आने-जाने का पथ लूं पहचान ।"
लकड़हारा यह समझ गया,
शिकारी है यह मूर्ख नया ।
जो कुछ कर दिखला सकते हैं नहीं, दिखाते शान,
'अधजल गगरी अधिक छलकती' — कहते हैं विद्वान ।

सारसी और उसके बच्चे

एक सारसी रहती-बसती थी अपने बच्चों के साथ
एक खेत में विधवा होकर, गुजर गए थे सारस नाथ ।

फसल खेत की जब पकी
तब बेचारी सारसी

लगी सोचने अब कुछ दिन में शुरू कटाई होगी,
यहां रात-दिन अब किसान की आवाजाई होगी ।
अब बच्चों के साथ यहां पर रहना ठीक नहीं है,
सबको लेकर उड़ चलना ही अच्छा और कहीं है ।

पर बच्चों ने उड़ना सीखा
पंख हिला कर नहीं अभी था ।
दूर कहीं वह कैसे जाए
कहां घोंसला नया बनाए ?
आखिर उसे पड़ा रुकना ही ।
पर वह कहीं अगर जाती थी,
तो बच्चों से थी कह जाती —
"देखो, फसल खड़ी लहराती ;
अब आएगा यहां किसान,
तुम चुपचाप लगा कर कान —
उसकी बातें सुनते रहना,
नहीं किसी से भी कुछ कहना;

और लौट कर मैं आऊं जब
मुझे बता देना बातें सब ।"

एक रोज वह गई खेत से चुगने को जब दूर,
मालिक वहां खेत में आया देख फसल भरपूर ।
कहने लगा कि "मैं अब इसको जल्दी कटवा लूंगा,
अपने कुछ पड़ोसियों को जा कल से ही भेजूंगा ।"

बच्चे सुनते रहे बात सब,
फसल शुरू होगी कटनी कब ।



सारसी जब बाहर से घर
लौट आई वापस चुग कर;
बच्चों ने उसको बतलाया —
"था खेतों का मालिक आया ।

कहता था कि फसल को अब वह जल्दी कटवा लेगा,
अपने कुछ पड़ोसियों को जा कल से ही भेजेगा ।

हमें अब कहीं और चल कर
बनाना होगा अपना घर ।''
सारसी बोली — ''चिन्ता की
नहीं है बात अभी कोई;
अगर पड़ोसी ही मालिक के
खेत काटने को आएंगे,
तो कटने में देर अभी है
चलने में फिर क्या जल्दी है ? ''

कुछ दिन बाद सारसी फिर जब गई हुई थी दूर,
मालिक वहां खेत का आया देख फसल भरपूर ।
कहने लगा — ''पड़ोसी अब तक नहीं काटने आए,
उनके काटे मुमकिन है यह खेत नहीं कट पाए ।
मैं इसलिए भाइयों को अब अपने कल भेजूंगा,
और फसल सारी की सारी उनसे कटवा लूंगा ।''

बच्चे सुनते रहे बात सब,
फसल शुरू होगी कटनी कब ।
सारसी जब बाहर से घर
लौट आई वापस चुग कर;
बच्चों ने उसको बतलाया —
''था खेतों का मालिक आया ।

कहता था कि भाइयों को अब वह कल से भेजेगा,
और फसल सारी की सारी उनसे कटवा लेगा ।

हमें अब कहीं और चल कर
बनाना होगा अपना घर ।''

सारसी बोली — "चिन्ता की
नहीं है बात अभी कोई;
भाईबन्द अगर मालिक के
खेत काटने को आएंगे,
तो कटने में देर अभी है
चलने की फिर क्या जल्दी है ?

फिर तुम कभी सुनो जो-कुछ भी वह मुझसे कहना सब,
कहीं और चल कर रहने की फिक्र करेंगे हम तब ।"
गई तीसरी बार सारसी फिर अब जब घर से बाहर,
मालिक वहां खेत का आया देखी फसल रही झर ।
कहने लगा कि "कोई भाईबंद न अब तक आए,
उनके भी काटे से शायद फसल न यह कट पाए ।"

तब उसने अपने लड़कों से
कहा, साथ ही थे जो उसके —
"हम खुद कल से काम करेंगे,
अपनी फसल आप काटेंगे ।"
रहे सारसी के बच्चे
ये सारी बातें सुनते ।
सारसी जब फिर अपने घर
लौट आई वापस चुग कर;
बच्चों ने उसको बतलाया —
"था खेतों का मालिक आया ।

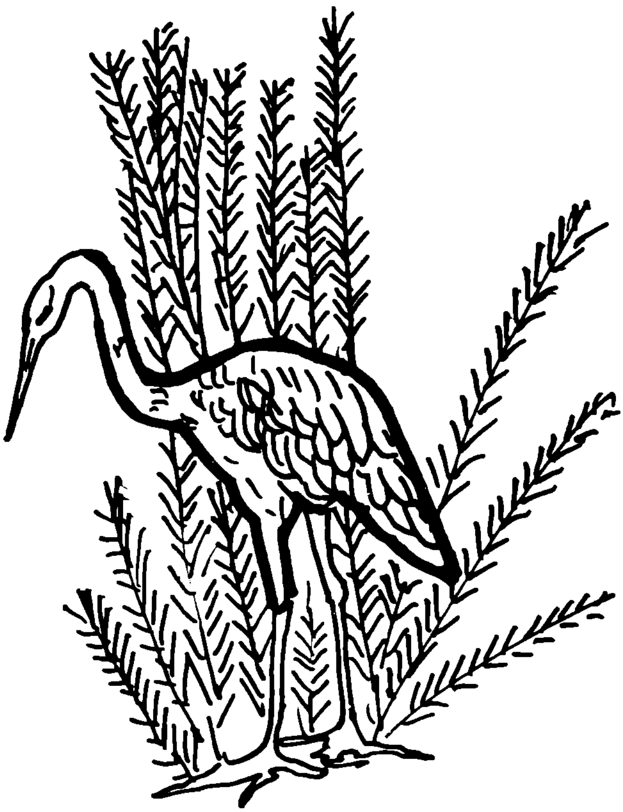
कहता था अपने लड़कों से जो सब उसके संग-साथ थे ।
हम कल से खुद काम करेंगे, अपनी फसल आप काटेंगे ।

हमें अब कहीं और चल कर
बनाना होगा अपना घर ।"
बच्चों की सुन बात सारसी
गहन सोच में पड़ कर बोली —

"मालिक अपनी फसल आप ही काटेगा यदि आकर,
तो अवश्य यह खेत कटेगा, है पूरा-पूरा डर ।

अब चलने का समय गया आ
दूर कहीं के जंगल में जा,
अब हमको बसना ही होगा
यहां खूब सुख अब तक भोगा ।"

अपने-आप किया करता है जो अपने सब काम
पूरे हो जाते अवश्य ही हैं उसके सब काम ।
आपकाज है महाकाज, फिर करने से क्या लाज,
जो न तकता औरों का मुंह उसके सिर पर ताज ।



बुढ़िया और उसकी दासियां

किसी कमखर्च बुढ़िया की
टहल में दासियां दो थीं ।
उन्हें बुढ़िया बड़े तड़के सबेरे ही जगाती थी,
उन्हें ठंडी हवा में जबकि गहरी नींद आती थी ।
नयन मलते हुए उठकर बेचारी बैठ जाती थीं,
न फिर दिन-भर ज़रा देर को आराम वे पाती थीं ।
वहीं तड़के अंधेरे एक मुर्गा बांग देता था,
जिसे सुन कर बजा क्या है, ज़माना जान लेता था ।
परेशानी बहुत थी दासियों को किन्तु करतीं क्या,
उन्हें डर था बहुत उस मालकिन खब्बीस बुढ़िया का
बहुत सोचा-विचारा और पहुंची इस नतीजे पर,
कि बुढ़िया को जगाए यदि न, मुर्गा बांग दे-देकर ।
पड़ी सोती रहे बुढ़िया सवेरे दिन निकलने तक
पड़ी सोती रहे वे भी मजे से दिन निकलने तक ।
तभी से बैर-सा कुछ दासियों ने मान मुर्गे से,
पकड़ कर मार डाला एक दिन चाकू-छुरी ले के ।



समझने वे लगीं, मुर्गा न देगा बांग अब, जिससे
बुढ़िया न जाग पाएगी अंधेरे झुटपुटे-तड़के ।
मगर यह सोचना उनका हुआ बेकार ही-सा कुछ,
न मुर्गे को छुरे से मार कर निकला नतीजा कुछ ।
हमेशा की तरह उनको जगाती ही रही बुढ़िया,
बड़े तड़के अंधेरे जाग जाती ही रही बुढ़िया ।
लगीं तब सोचने मिल बैठ कर वे दासियां दोनों,
कि "मुर्गा मर गया बेकार ही में क्या मिला हमको ।"
हत्या करता एक, और है दूसरा सजा पाता,
खुदग़रज़ों की दुनिया में है यही न्याय कहलाता ।

लक्ष्मी की पूजा

एक आदमी था निर्धन,
मुश्किल से पाता भोजन ।
वस्त्र न थे उसके तन पर,
टूटा-फूटा-सा था घर ।

एक मूर्ति लक्ष्मी की उसने पड़ी कहीं पर पाई,
कुछ तकदीर बदलती अपनी उसको दी दिखलाई ।

वह ले आया उसे उठा कर,
दुनिया भर की आंख बचाकर ।
और उसे ला रखा घर पर,
सुन्दर आला एक सजा कर ।

रोज रात-दिन था वह उसकी पूजा करता रहता,
भक्ति-भाव में भर कर उससे जाने क्या-क्या कहता ।
था उसको विश्वास कि लक्ष्मी जब खुश हो जाएगी,
उसके घर-आंगन में सोना-चांदी बरसाएगी ।
पर वह जितनी पूजा करता, भक्ति-भाव दिखलाता,
उतना ही था और अधिक वह निर्धन होता जाता ।

इसी तरह पूजा करते जब
कितने ही दिन बीत गए तब ।

उसे नहीं विश्वास जरा भी रहा भक्ति-पूजा पर,
पत्थर के ऊपर दे मारी उसने मूर्ति उठा कर ।
मूर्ति टूटते ही उसमें से मुहरें गिरी बिखर कर,
चम-चम, चम-चम लगा चमकने उसका वह टूटा घर ।



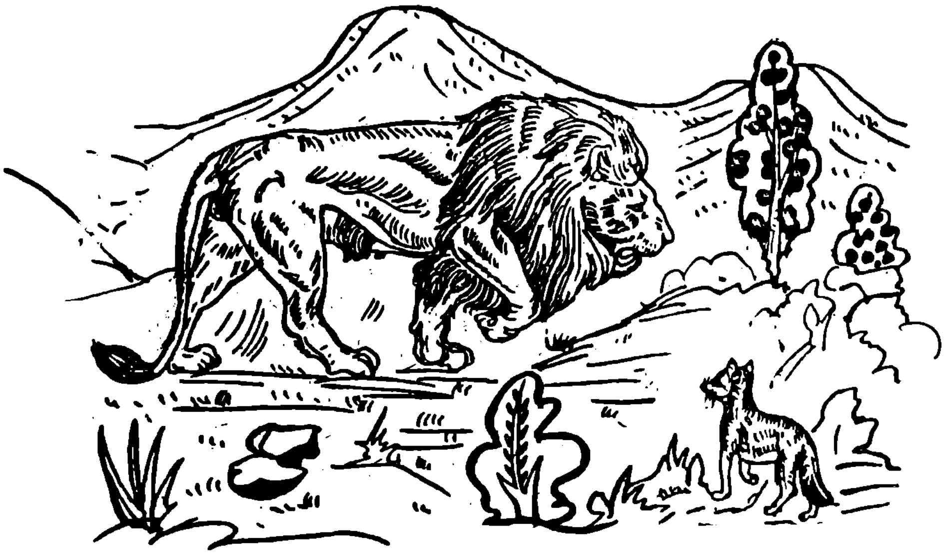
तब वह लगा सोचने मन में
क्या अचरज देखा जीवन में,
जो न मिला पूजा-श्रद्धा से
हाथ जोड़ कर शीश झुका के !
वह मिल गया मुझे अपने घर
आई लक्ष्मी को ठुकरा कर ।

कभी नहीं आती है लक्ष्मी उन लोगों के पास,
जो कुछ करते नहीं, लगाए बैठे रहते आस,
पर अपने पुरुषार्थ पर जो रखते हैं विश्वास,
बिना बुलाए आ जाती है वह खुद उसके पास ।

भेड़िया और शेर

एक गीदड़ के बच्चे ने
बहुत ही सीधे-सच्चे ने,
शेर को कभी न देखा था
नाम केवल सुन रखा था ।
एक रोज जब वह वन में जा
इधर-उधर फिर-घूम रहा था,
कहीं दूर पर उसने देखा
एक बड़ा-सा शेर खड़ा था ।
सहम गया वह उसे देख कर
लगा कांपने थर-थर, थर-थर,
दिल उसका घबराया ऐसा
वह पड़ रहा वहीं मुरदे-सा ।

शेर-बबर उसको बिन देखे आगे चला गया पर
गीदड़ के बच्चे के मन में बेहद बैठ गया डर ।
बहुत दिनों के बाद एक दिन फिर गीदड़ का बच्चा,
किसी नदी के तट पर जाकर यों ही घूम रहा था ।
वही शेर मिल गया उसे फिर उस जंगल के अंदर,
जिसे देख कर पहले उसका तन कांपा था थर-थर ।
पर उसने कुछ सोच-समझ कर मन पर काबू पाया,
उसे देख कर इस बार न पहले जैसा वह घबराया ।
खड़ा रहा वह उसी जगह पर मन में हिम्मत करके
शेर पास से होकर उसके निकल गया पग धर के ।



कुछ दिन के बाद मगर फिर वह गीदड़ का बच्चा,
जब जंगल में आजादी से यों ही घूम रहा था ।
निकल वहीं आ गया अचानक वही शेर विकराल,
जिसको सारे पशु जंगल के बतलाते थे काल ।
पर इस बार न शेर देख कर वह बिल्कुल घबराया,
हिम्मत करके सीधा उसके मुंह के आगे आया ।

और उससे यों कहा पुकार—
"ऐ वन-पशुओं के सरदार !
नमस्ते मेरी हो स्वीकार,
आप अच्छे तो हैं सरकार ?"

शेर समझ कर उसको बच्चा बिना दिए कुछ उत्तर,
निकल गया इस झाड़ी से आ उस झाड़ी में होकर ।
अपने मन के डर के ऊपर जो काबू पा जाते,
बच्चे वही बड़े होकर हैं अचरज कर दिखलाते ।

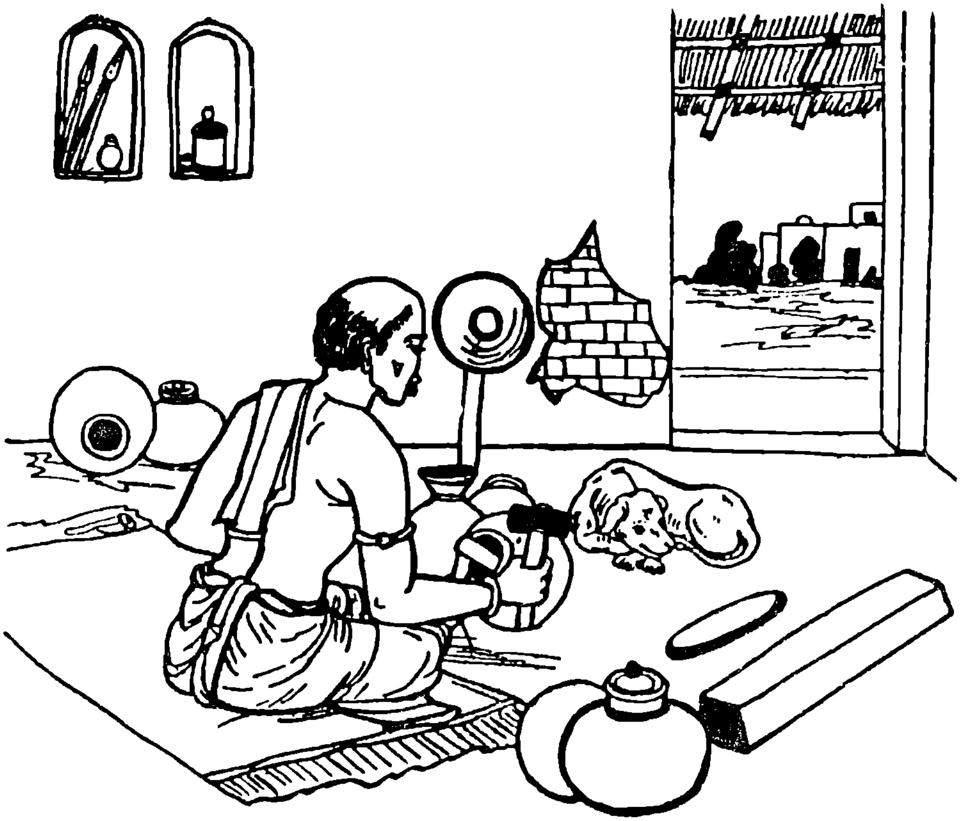
ठठेरा और कुत्ता

एक ठठेरा लिए हथौड़ी दिन-भर खट-खट करता था,
पेट बाल-बच्चों का अपने इसी तरह से भरता था ।

उसका कुत्ता अपने अगले
पैरों के ऊपर सिर रखे
लेटा, करता था आराम
जब तक वह करता था काम,
और ठठेरा जब उठ कर
खाने को जाता था घर ।

कुत्ता भी उसके पीछे था पूंछ हिलाता जाता,
और सामने मालिक के ही डट कर खाना खाता ।

एक दिन कहा ठठेरे ने —
"अरे आरामतलब कुत्ते !
नहीं क्या बिल्कुल शर्म तुझे ।
देखता तू क्यों नहीं मुझे,
परिश्रम कितना करता हूं
पेट तब अपना भरता हूं ।



और तू सोया करता है
नहीं कुछ करता-धरता है,
मुफ्त की रोटी खाता है
पूंछ तक नहीं हिलाता है ।"

बिना किए मेहनत जो भोजन मुफ्त मिला खाते हैं,
वे कुत्ते की तरह हमेशा दुत्कारे जाते हैं ।

गधा और पिल्ला

एक आदमी ने पाला था एक गधा औ' पिल्ला एक,
पिल्ला था शैतान बहुत ही, किन्तु गधा था सीधा नेक ।
नौकर-चाकर खूब गधे को दाना-घास खिला कर,
काम लिया करते थे उससे अक्सर तो दिन-दिन-भर ।
पिल्ले को करना पड़ता था कभी नहीं कुछ काम,
सदा घूमता-फिरता था वह, या करता आराम ।
मालिक उसे गोद में अक्सर उठा-बिठा लेता था,
और हाथ से अपने उसको खाने को देता था ।
यह सब देख गधा पिल्ले से लगा ईर्ष्या करने,
मालिक को कैसे साधा है देखो दुष्ट निडर ने ।
एक रोज जब मालिक बैठा था खाने की मेज पर
तरह तरह के भोजन रखे थे अनगिनती प्लेट-भर ।
पिल्ला गोदी में बैठा था, मालिक उसे दुलार के
खिला रहा था छोटे-छोटे कौर बेहद प्यार से ।
गधा देख कर यह सब अपने मन को रोक न पाया,
और तुड़ा कर रस्सी सीधा उसी जगह पर आया ।

अगली टांग को उचका कर
उसने रख ही दिया मेज पर,
मालिक उठ भागा घबरा कर
पिल्ले को भी दूर हटा कर ।

प्याले औ' तश्तरी मेज से उछल गिरे जा दूर,
खन-खन-खन पृथ्वी के ऊपर होकर चकनाचूर ।



उसकी इच्छा थी वह मालिक की गोदी में बैठे,
पिल्ले की ही तरह शान से शीश उठाए ऐंठे ।
भागे-दौड़े आए खड़बड़ सुन कर नौकर-चाकर,
असमंजस में पड़े गधे को आए देख वहां पर ।
फिर तो उसको सब ने मिल कर डंडों से पीटा,
उसके दोनों कान पकड़ कर खींचा और घसीटा ।
किन्तु समझ में नहीं गधे की फिर भी इतना आया,
बच्चों से ईर्ष्या करने का उसने यह फल पाया ।

गीदड़ और बकरा

गीदड़ एक कुएं में गहरे
गिरा अचानक चलते-फिरते ।
बहुत तरह वह कूदा-उछला
पर न कुएं से बाहर निकाला ।

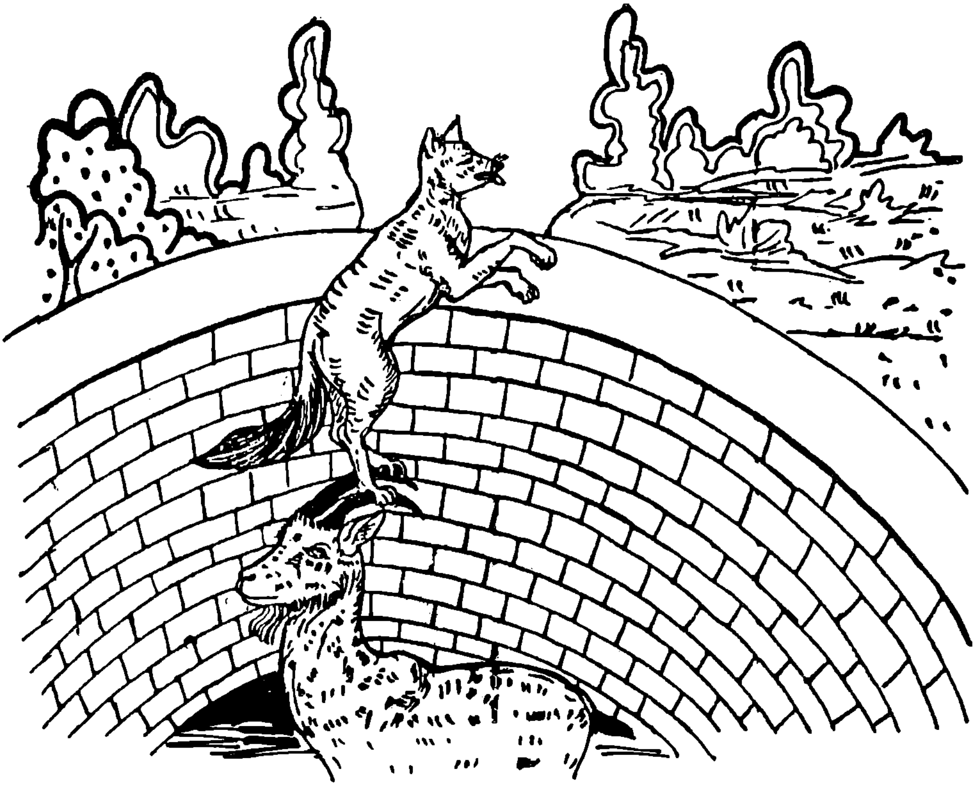
एक मूर्ख बकरा यों ही प्यासा घूम रहा था,
पास कुएं के आकर उसने नीचे जल में देखा ।

देख कर गीदड़ को नीचे,
लगा बकरा कहने उससे —

"मित्र ! कुएं का पानी कैसा ? मीठा है या खारा ?
सूखा हुआ गला है मेरा, प्यास से चलता मारा ।"
गीदड़ था चालाक बड़ा वह अपना कष्ट छिपा कर,
बकरे से बोला खुश होकर, झूठी बात बना कर —

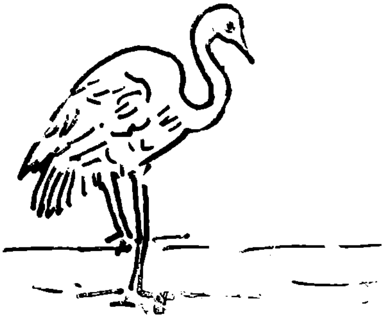
"इस पानी का कहना क्या
देखो तुम भी नीचे आ,
पानी है इतना मीठा
पिया न हो जितना मीठा ।

कैसी निर्मल धारा है, इतना पास किनारा है,
तुम भी पास चले आओ अपनी प्यास बुझा जाओ ।"
बकरे ने यह बात सुनी तो कूद कुएं में आया,



गीदड़ ने उसके आते ही अपना दांव चलाया ।
उसने उसके सींगों पर चढ़ मारी एक छलांग,
और कुएं के बाहर आया नट का-सा धर स्वांग ।
बकरा बेचारा फिर कुएं से निकल सका न बाहर,
मरा उसी के भीतर पानी पी-पी पेट फुला कर ।

जो पहले से सोच-समझ कर अगला कदम न धरते,
इसी तरह वे औंधे मुंह गिर अंधकूप में मरते ।



मोर और बगला

एक मोर अपनी अति सुंदर पूंछ खूब फैला कर,
एक सरल बगले से बोला — "देखो ये मेरे पर ।

ये हैं रंग-बिरंगे कैसे
बिल्कुल इन्द्रधनुष हो जैसे ।

तेरे पंखों का तो रंग है भद्दा राख-सरीखा,
इससे अधिक बुरा गंदा रंग मुझको और न दीखा ।"

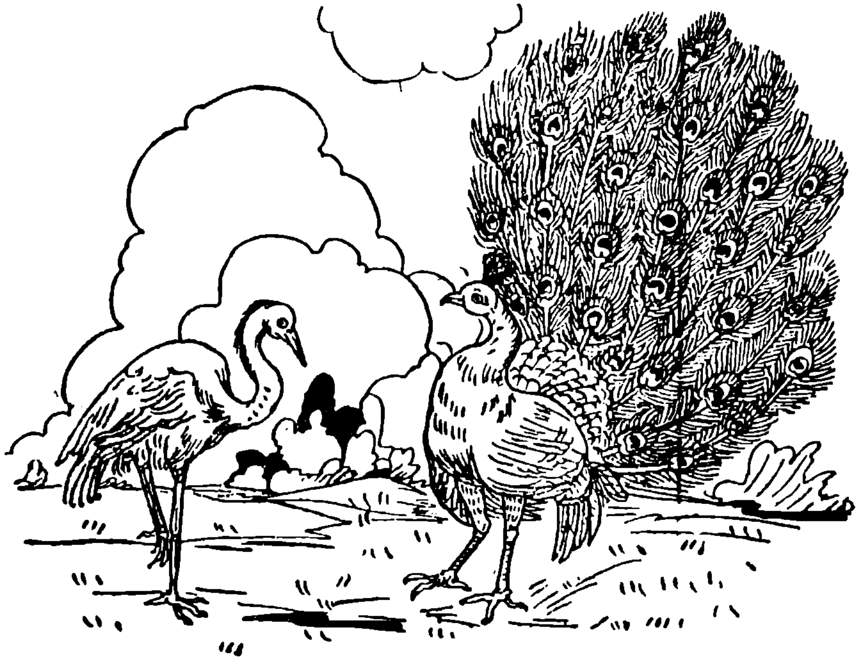
बगला बोला यह सुन कर —
"यह तो सच कहते हो पर

जब मैं अपने हल्के-फुल्के पंखों को फैला कर,
सैर किया करता हूं नभ में दूर-दूर तक जाकर ।

तब तुम अपने पंख समेटे
शीश झुकाए लाज लपेटे,

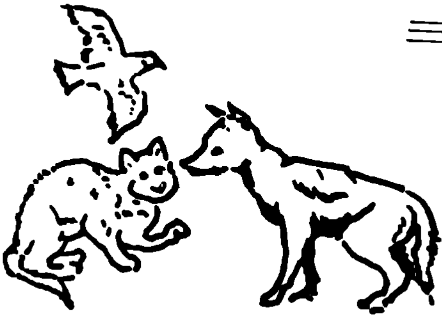
घूरे, कूड़े-करकट पर
समय बिताते हो चुग कर ।

सुंदरता में सचमुच कोई नहीं तुम्हारा सानी,
पर मैं हूं अपने उडने की ताकत का अभिमानी ।



नहीं एक भी दोनों में से हेठा कहला सकता,
कर सकते तुम नहीं कि जो मैं करके दिखला सकता ।''

चील बिल्ली और गीदड़ी



देवदार की एक शाखा पर
एक चील ने नीड़ बना कर,

दिए बहुत-से
अंडे-बच्चे ।

उसी पेड़ के एक तने में जगह खोखली पाकर,
बच्चे दिए एक बिल्ली ने छोटे-छोटे सुंदर ।

जड़ में उसी पेड़ के नीचे
दिए गीदड़ी ने कुछ बच्चे ।

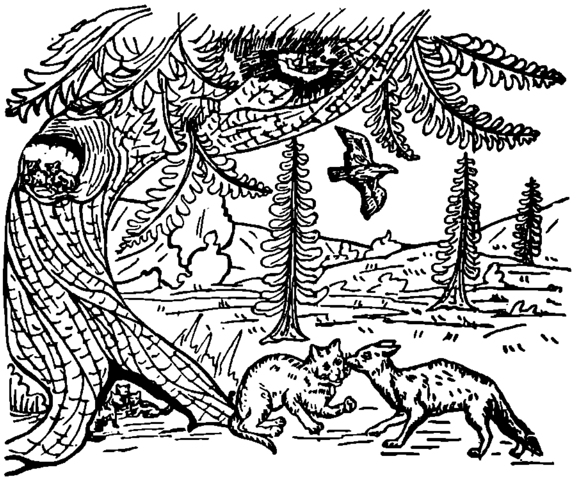
बिल्ली ने देखा, मेरा घर नहीं विपत से खाली,
ऊपर चील, गीदड़ी नीचे, कैसे हो रखवाली ?
उसने सोचा, किसी तरह से ये दोनों ही दुश्मन,
मारे जाएं तो मिट जाए मेरे भय का कारण ।

एक रोज़ कुछ अवसर पाकर
नहीं गीदड़ी थी जब घर पर ।
कहा चील से उसने "बहना,
एक रहस्य है तुझसे कहना ।

पिछले कुछ दिन से होता है मुझको यह आभास,
हम दोनों का साथ-साथ ही होगा सत्यानास ।

दुष्ट गीदड़ी जड़ें वृक्ष की,
रोज बैठ कर खोदा करती ।

किसी रोज यह वृक्ष गिरेगा
मेरा-तेरा घर बिगड़ेगा ।
बच्चों को वह खा जाएगी
मुझ-तुझ पर आफत आएगी ।''
चील बात बिल्ली की सुन कर
मन-ही-मन में गई सहम डर ।



एक रोज फिर अवसर पाकर जब कि चील नहीं थी वृक्ष पर,
उसने कहा गीदड़ी से जा—''बहन, तू न देखती अरे क्या !

चील बड़ी डाइन है, तेरे बच्चों को वह अक्सर,
देर-देर तक घूरा करती है बैठी शाखों पर ।

किसी रोज वह चोंच मार कर लेगी उनकी आंखें काढ़,
वह पक्षी है, पकड़ न उसको दाब सकेगी तेरी दाढ़ ।''

बिल्ली की ये बातें सुन कर,
गई गीदड़ी भी बेहद डर ।

वह बेचारी तब से बाहर कहीं नहीं थी जाती,
बच्चों की रक्षा करने में सारा समय बिताती ।
उधर चील भी छोड़ नीड़ को कहीं नहीं थी जाती,
देवदार के गिर जाने से थी मन में घबराती ।
एक-दूसरे के डर से थीं दोनों दूर न जातीं,
लाकर अपने बच्चों को वे कुछ भी न खिला पातीं ।

दोनों के बच्चे बेचारे
दुखियारे किस्मत के मारे ।
थे कुछ भी न अन्न-जल पाते
निशि-दिन दुबले होते जाते ।

दोनों में से नहीं किसी का भी बिल्ली को था डर,
वह बच्चों का खाना ले आती थी जाकर बाहर ।
इस प्रकार से उन दोनों के दिल में डर बैठा कर,
बिना मौत मारे बिल्ली ने उनके बच्चे सुंदर ।

जो दुष्टों की बात पर करते हैं विश्वास,
इसी तरह होता सदा उनका सत्यानास ।

गीदड़ और लकड़हारा

शिकारी के कुत्तों से डर
एक गीदड़ ज्यों-त्यों बच कर,

गया हांपता हुआ दौड़ता एक लकड़हारे के पास,
और कहा उससे कि दया कर मुझे छिपा लो अपने पास ।
उसे लकड़हारे ने अपने घर के भीतर लाकर,
छिपा दिया कुटिया के पीछे कोने में ले जाकर ।

और घर के दरवाजे पर
बैठ गया खुद वापस आकर ।

इतने में आ गया शिकारी धनुष-बाण ले हाथ,
अपने महा भयानक कुत्ते को ले अपने साथ ।

शिकारी ने उससे पूछा —
"लकड़हारे, यह तो बतला,

अभी एक गीदड़ को आते तूने इधर न देखा ।
मैं उसका ही पीछा करते-करते यहां गया आ ।"





"नहीं" — लकड़हारे ने मुख से कह कर, किया इशारा
अपने घर की ओर, छिपा था गीदड़ जहां बेचारा ।
किन्तु शिकारी घबराहट में कुछ भी समझ न पाया,
जल्दी में चल दिया वहां से कुत्ते-सा बौराया ।
चला गया जब दूर शिकारी, नहीं रहा कोई डर,
गीदड़ तभी निकल कोने से लगा भागने बाहर ।

लकड़हारे नें कहा पुकार
"अरे ओ खुदगरज मक्कार !

धन्यवाद कह कर जाना तुझको नहीं गवारा,
तुझे बचाता नहीं अगर मैं तो तू जाता मारा ।"
गीदड़ ने जाते-जाते यों उससे कहा सुना कर —
"तुमने मुझे बचाया लेकिन दिया इशारा भी कर ।"
जो मन-वचन-कर्म तीनों से सत्य नहीं अपनाते,
वे दुनिया में कभी किसी से आदर-मान न पाते ।

कोयल और गीदड़

किसी जगह पर खूब घना
एक पेड़ था सेमल का ।
कोयल एक कहीं से आकर
बैठ गई उसकी शाखा पर,
उसे जोर की भूख लगी थी
मिला देर से कहीं न कुछ भी ।
उसने सोचा ये सेमल के
फल जल्दी ही पक जाएंगे ।
तब मैं इन्हें प्रेम से खाकर
लूंगी खूब पेट अपना भर ।
गीदड़ एक घूमता-फिरता
उसी पेड़ के नीचे निकला ।
उसने दृष्टि डाल कोयल पर
उसके मन की बात समझ कर,
कहा— "बहन भोली, यह आशा
बहुत खूब है किन्तु निराशा,



तुझे अंत में हाथ लगेगी
तुझे सिर्फ दुख-ही-दुख देगी ।
क्योंकि पेड़ है यह सेमल का
नहीं भरोसा इसके फल का,
पक कर भी बेकार रहेगा
तुझे न कुछ खाने को देगा ।
रुई हवा में उड़ जाएगी
तू बस बैठी पछताएगी ।"

गलत जगह आशा करने से हाथ नहीं कुछ आता ।
बुद्धिमान जन सोच-समझ कर जोड़ा करते नाता ।

गीदड़ और शेर

एक बार जब जा पश्चिम में सूरज डूब रहा था,
चम-चम, चम-चम चमक पहाड़ी-जंगल खूब रहा था ।
एक भेड़िया चलता-फिरता पगडंडी पर आया,
दूर-दूर तक पड़ी पहाड़ी पर तब उसकी छाया ।

देख भेड़िए ने यह सोचा —

मैं तो हूं पशु बहुत बड़ा,

जिसकी बीघे-भर की छाया,

होगी, उसकी कितनी काया !

व्यर्थ शेर से डरता हूं मैं

उसका आदर करता हूं मैं ।

क्यों न शेर को मार गिराऊं

जंगल का राजा बन जाऊं ।

वह यह सब था सोच रहा

पगडंडी पर खड़ा हुआ ।

इतने में ही वहां अचानक एक शेर आ पहुंचा,
और पीठ पर उसकी कस कर मारा अपना पंजा ।



गिरा भेड़िया पृथ्वी पर
शेर बैठ कर छाती पर,
चीर-फाड़ खा गया उसे
मुफ्त पड़ा पा गया उसे ।

देख-देख अपनी परछाई जो घमंड करते हैं,
वे न सत्य को कभी समझते, बिना मौत मरते हैं ।



कुत्ता, मुर्गा और लोमड़ी

एक कुत्ते से मुर्गे की
दोस्ती थी काफी गहरी ।
एक रोज वे दोनों यों ही कहीं घूमते-फिरते,
दूर शहर से किसी घने-से जंगल में जा निकले ।
वहीं शाम से रात गई हो,
मिला नहीं रास्ता जाने को ।
रात बिताने को तब मुर्गा चढ़ा पेड़ के ऊपर,
लेट रहा कुत्ता बेचारा उसकी जड़ पर पड़कर ।
रात गई जब हुआ सवेरा
सूरज ने अपना रथ फेरा ।
किरणों ने सारा वन घेरा
चिड़ियां चल दीं छोड़ बसेरा ।
आदत के कारण मुर्गे ने उठ कर बांग लगाई,
सुन उसकी आवाज़ लोमड़ी एक कहीं से आई ।
उसने समझा, मिला शिकार
उसे खूब खाऊंगी मार ।
लगी पेड़ के नीचे आकर वह कहने मुर्गे से,
क्या कहने हैं वाह, तुम्हारे इस मीठे गाने के ।
तुम नीचे आओ, हम-तुम साथ-प्रभाती गाएं,
झूम उठे यह सारा जंगल ऐसा गीत सुनाएं ।
मुर्गा समझ गया चालाकी सारी उसके मन की,
कि यह रात-भर की भूखी है, इच्छा है भोजन की ।
फिर भी वह उससे बोला
बात बना, बन कर भोला —

"एक मित्र मेरा है जड़ पर इस पेड़ की सोता
वह भी अगर जाग जाता तो कितना अच्छा होता ।



हम दोनों गाना गायेंगे और बजाएगा वह,
देख तुम्हें कितना सुख अपने मन में पाएगा वह ।"
सुन उसकी यह बात लोमड़ी लगी देखने बढ़ कर,
कुत्ता एक पड़ा सोता था उसी पेड़ की जड़ पर ।
आहट उसकी सुन कर कुत्ता जाग गया सोते से ।
और उछल कर एक तमाचा मारा फौरन उसके ।

उसकी आंखें निकल पड़ीं,
वह चिल्लाई विकल बड़ी ।

तब तक कुत्ते ने दबोच कर दिए वे झटके,
उसको ईश्वर याद गया आ, प्राण गले में अटके ।
बुरा सोचता जो औरों का, खुद मारा जाता है,
मन का पाप अवश्य एक दिन अपना रंग लाता है ।

मुसाफ़िर और अंगूठी

राहगीर दो साथ-साथ थे एक राह पर जाते,
दोनों में मित्रता बड़ी थी साथ सफर के नाते ।
मिली एक को पड़ी राह में एक अंगूठी सुंदर,
कहने लगा दूसरे से वह मन-ही-मन खुश होकर —

"देखो, मुझे मिला यह क्या,
मेरा भाग्य बहुत अच्छा ।"
कहा दूसरे ने यह सुन कर —
"सचमुच है यह बेहद सुंदर,
पर न कहो तुम 'मुझे मिली है'
साथ-साथ ही मेरे हो तुम ।
'हमें मिली' यह क्यों न कहो तुम,
आधा हिस्सा मुझको दो तुम ।"

राहगीर पहला यह सुनकर हुआ बहुत नाराज,
"मुझे मिली है यह" — बोला वह कर कठोर आवाज —

"अपनी चीज़ तुम्हें दे दूं,
ऐसा तो मैं मूर्ख न हूं ।"
सुन कर चुप रह गया दूसरा
नहीं किया उसने कुछ झगड़ा ।



थोड़ी दूर गए थे आगे जब वे पथ पर बढ़ कर,
मालिक वहां अंगूठी का आया घोड़े पर चढ़ कर ।

देख दूर से उन दोनों को
'चोर-चोर' कह चिल्लाया वह ।
तभी पकड़े जाने के डर से
कहा दूसरे से पहले ने —
"बड़ी विपत में आज पड़े हम,
अब तो जाएंगे पकड़े हम ।
जेल भुगतनी होगी हमको,
कहो मित्र, अब कैसे क्या हो ?"
कहा दूसरे साथी ने तब —
"अरे मित्र, ऐसा न कहो अब,
कहो विपत में बड़ी पड़ा मैं
कहो कि जाऊंगा पकड़ा मैं ।"
सुख-सम्पत्ति में जो न मित्रता का संबंध निभाता,
दुख-विपदा में कोई उसका साथ न देने आता ।

चूहा और बैल



चूहा एक बड़ा नटखट था,
करता रहता नित खटपट था ।

एक बैल भी था उस घर में जिसमें वह रहता था,
वह बेचारा उस चूहे से कभी न कुछ कहता था ।
एक रोज सो रहा बैल था पड़ा नांद के पास,
यों ही चलता-फिरता चूहा आया उसके पास;

और पूंछ में काट कर
भागा सिर पर पैर धर ।

चूहे की हरकत से हो गया बैल नाराज,
लगा सोचने इसे पकड़ कर मार धरूंगा आज ।
आसपास में वहीं कहीं थी ऊंची-सी दीवार,
उसकी जड़ में था चूहे का बिल वह किसी प्रकार ।

उस बिल में ही भाग छिपा
और तान कर मूंछ हंसा ।

लगा बैल सींगों से अपने वह दीवार गिराने,
तब तो चूहे का दिल धक-धक लगा बहुत घबराने ।

पर दीवार न खिसकी तिल-भर
बैठ रहा वह आखिर थक कर;

सट कर वहीं कि चूहा जब भी निकले बिल से बाहर,
वह उसको अपने सींगों से दे टुकड़े-टुकड़े कर ।

थोड़ी देर बाद चूहे ने जब बिल में से झांका,
खर्राटे भर रहा बैल था वहीं पड़ा रण-बांका ।

वह फौरन आ बिल से बाहर
भाग गया फिर उसे काटकर ।

बैल जाग कर लगा देखने इधर-उधर अचरज से,
किन्तु किसी भी तरह न चूहा फंसा दांव में उसके ।

तब चूहे ने बिल में से
कहा "बैल अति मूरख है ।

केवल देह बड़ी होने से जीत नहीं सकता तू,
मेरा पीछा छोड़ नांद पर जाकर भूसा खा तू ।"
नहीं बैल की उस चूहे के आगे कुछ चल पाई,
'बुद्धि बड़ी या भैंस', तभी से सबने उक्ति बनाई ।

गधा और बाघ

एक गधा चर रहा वहां था,
हरा-भरा मैदान जहां था ।

एक बाघ अत्यंत भयानक उसे पकड़ने आया,
गधा देख कर उसकी सूरत, सहम गया, घबराया ।
जब उपाय बचने का उसने कोई और न जाना,
एक पैर से लंगड़ाने का उसने किया बहाना ।
बाघ पास आ लगा पूछने — "तू क्यों लंगड़ाता है ?"
कहा गधे ने — "नहीं दर्द से पांव धरा जाता है ।
था चुभ गया पैर में कांटा इससे लंगड़ाता हूं,
क्या बतलाऊं चार रोज से चैन नहीं पाता हूं ।
तुम मुझको खाने आए हो, मैं यह समझ रहा हूं,
किन्तु गले में चुभ जाएगा कांटा, यह बतला दूं ।
इसी लिए तुम यदि निष्कंटक मुझको खाना चाहो,
तो इस चुभे हुए कांटे को पहले खींच निकालो ।"
मन में कहने लगा बाघ यह बात गधे की सुन कर,
ठीक यही है पहले कांटा खींच निकालूं बाहर ।

कांटेवाला पैर मोड़ कर,
गधा खड़ा हो गया वहीं पर ।

बाघ देखने लगा ध्यान से
कहां चुभा है कांटा उसके ।



तभी गधे ने मौका पाकर मारी एक दुलत्ती,
बाघ गिरा औंधे मुंह, उसकी निकल पड़ी बत्तीसी ।

गधा बड़ी तेजी से फौरन
भाग पड़ा मानो जीता रन ।
और भाग आया अपने घर
जहां न था उसको कोई डर ।

अगर बहाना कांटे का कर गधा नहीं लंगड़ाता,
तो न मौत के मुंह से बच कर वापस जा पाता ।

मच्छर और पहलवान

पहलवान था एक कहीं,
कोई जिसकी तरह नहीं ।
गठा हुआ था उसका तन,
मन भर खाता था भोजन ।

जिससे कुश्ती लड़ता था,
पीछे ऐसे पड़ता था ।
उसको मार गिराता था,
नाकों चने चबवाता था ।

एक बार एक मच्छर उड़,
आ बैठा उसके ऊपर ।
कोई हरा न जिसे सका,
और उसे काटने लगा ।

पहलवान था जितना उसको खुद से दूर भगाता,
बारबार वह उतना ही था आकर उसे सताता ।

आखिर होकर बहुत दुखी,
पहलवान ने विनती की —

"हे हे हनुमान तुम आओ,
इस मच्छर से मुझे बचाओ ।
इससे मैं कुश्ती भी लड़ कर,
तोड़ नहीं सकता इसके पर ।

इससे नहीं बचा पाए यदि, तो मैं यह समझूंगा,
तुम हो इष्ट देखने-भर के, नाम नहीं फिर लूंगा ।"
जिससे हार गए दुनिया के बड़े-बड़े ताकतवर,
जीत गया उस पहलवान से एक जरा-सा मच्छर ।



किसान और नाशपाती का पेड़

था बगीचे में किसान के पेड़ नाशपाती का,
जो न पिछले कई वर्षों से फूला-फला कभी था ।
जब किसान को रही न आशा उसमें फल आने की,
तब उसने ली ठान हृदय में, उसे उखड़वाने की ।
वह उसकी जड़ लगा खोदने एक कुल्हाड़ी लाकर,
लेकिन अनगिन बने घोंसले थे उसकी शाखों पर;
जिनमें लेते रैनबसेरा कितने ही पंछी थे,
वे सब उससे विनती करते हुए लगे यह कहने —

"देखो, दया करो हम पर,
हम सब हैं पंछी नभचर ।
प्रात: हुए उड़ जाते हैं,
लौट शाम को आते हैं ।
आ नीड़ों में सो रहते,
नहीं किसी से कुछ कहते ।
तुम क्यों हमें सताते हो,
यह तरु काट गिराते हो ।
इसे लगा ही रहने दो,
दिल से दुआ हमारी लो ।"

पर न पक्षियों की बातों का कुछ भी हुआ प्रभाव,
उपजा उस किसान के मन में नहीं दया का भाव ।



और कुल्हाड़ी मार-मार कर,
जड़ें खोदता रहा बराबर ।
चार-पांच ही हाथ सका था मार तभी उसने देखा,
जड़ के एक खोखले में है शहद-मक्खियों का छत्ता ।
उसे देख खुदगरज किसान,
मन में खुश हो गया महान ।
कहने लगा, "नाशपाती का पेड़ न अब काटूंगा,
इसे काट कर भी तो लकड़ी थोड़ी ही पाऊंगा ।
पर यह छत्ता बिना छुए ही यदि बढ़ जाने दूंगा
तो इसमें से तीन-चार मन शहद खींच मैं लूंगा।"
उसने अलग कुल्हाड़ी रख दी,
जड़ें छोड़ जैसी-की तैसी ।
स्वार्थ ही है इंसानों से हरे वृक्ष कटवाता
स्वार्थ ही है इंसानों से खड़े ठूंठ पुजवाता ।

घोड़ा और गधा

एक बंजारा व्यापारी
तिजारत करता था भारी ।

उसके पास एक घोड़ा था और गधा था एक,
दोनों बहुत भले साथी थे आदत के भी नेक ।

व्यापारी था माल लाद कर
घोड़े और गधे के ऊपर ।
दूर-दूर ले जाया करता ।
खूब कमा, धन लाया करता ।

एक बार वह माल लाद कर उन दोनों के ऊपर,
था जा रहा पहाड़ी रास्ते के ऊपर से होकर ।
पिछले कुछ दिन से न गधे की तबीयत थी कुछ ठीक,
चढ़ी न जाती थी उससे वह ऊंची-नीची लीक ।

हो लाचार गधे ने की
साथी घोड़े से विनती —

"मैं बीमार कई दिन से हूं, मुझ पर दया करो तुम,
मुझ पर बोझ बहुत भारी है, थोड़ा-सा ले लो तुम ।"
बात गधे की सुन कर घोड़ा हुआ बहुत नाराज,
बोला — "कुछ बीमार नहीं हो, तुम हो धोखेबाज ।

मैं क्यों बोझ तुम्हारा लादूं ?
मैं तुम-जैसा गधा नहीं हूं ।"

यह जवाब घोड़े का सुन कर गधा हुआ हैरान,
कदम-कदम पर बेचारे के निकल रहे थे प्राण ।
मालिक के डर से पर बढ़ता जाता था मजबूर,
यही सोचता हुआ — न जाने चलना कितनी दूर ।

कांप रहा था उसका तन,
रह-रह घबराता था मन ।



कमज़ोरी के कारण आखिर गिरा एक ठोकर खा,
फैल गया धरती पर गिर कर लदा पीठ का बोझा ।

और सांस अंतिम लेकर
वहीं गया बेचारा मर ।
मालिक ने यह सब देखा तो
लगा सोचने, अब क्या हो ?
कैसे बोझ चले यह आगे
यहां कहां बस, ठेले-तांगे ।

आखिर उसने सोच-विचार,
उस बोझ को किसी प्रकार ।
लाद दिया घोड़े के ऊपर,
और गधे का शव भी लेकर ।
उसके ही ऊपर रख आगे लगा हांकने घोड़ा,
सोचा उसने और नहीं तो चमड़ा ही है थोड़ा ।
अब तो घोड़ा मरा बोझ से, याद उसे हो आया,
नहीं गधे पर दया दिखाने का उसने फल पाया ।
गधे बेचारे के बोझे को बांट अगर वह लेता,
तो वह क्यों मरता, मालिक क्यों उसको यह दुख देता ।
जो दुनिया में कभी किसी के दुख में काम न आते,
इसी तरह वे हैं जीवन में कष्ट और दुख पाते ।

बंदर और मुसाफ़िर

किसी समय में किसी देश पर
राज किया करते थे बंदर ।
राजसभा में रोब जमा कर
खांव-खांव करते थे दिन-भर ।

एक समय की बात, कहीं के दो राही इनसान,
यों ही वहां घूमते-फिरते आ निकले अनजान ।

एक का नाम सत्यवादी
दूसरे का मिथ्यावादी ।

कभी सत्यवादी था मुख से झूठ न बोला करता,
और सदा मिथ्यावादी था मिथ्या का दम भरता ।

बंदरों के राजा ने जब
सुना कि दोनों आए तब ।
पकड़ बुलवा भेजा उनको
सभा में हाज़िर होने को ।

भरी सभा में गद्दी पर था राजा बंदर बैठा,
और सभासद हर बंदर था बड़ी शान से ऐंठा ।

सत्यवादी मिथ्यावादी
बेचारे वे दोनों राही ।
सभी के बीच गए लाए
देख राजा को घबराए ।

उन दोनों को देख गरज कर बोला राजा बंदर —
"अरे राहगीरो, दो मेरे एक प्रश्न का उत्तर ।

मेरी राजसभा कैसी है, मैं कैसा राजा हूं ?"
मिथ्यावादी बोला — "आज्ञा हो तो मैं उत्तर दूं ।

आपके जैसा राजा तो
नहीं सकता दुनिया में हो ।
न ऐसी राजसभा कोई
किसी भी राजा की होगी ।



धन्य है वनमानुष महाराज,
धन्य यह राज, तख्त औ' ताज ।"
सुन मिथ्यावादी की बातें भरी चापलूसी से,
राजा बंदर बोला अपने मुख्य मंत्री से —
"दो इनाम इसको भरपूर
यही हमारी है दस्तूर ।"
मन में कहा सत्यवादी ने सुन कर यह फरमान,
मिला मूर्ख मिथ्यावादी को जब यह आदर-मान;

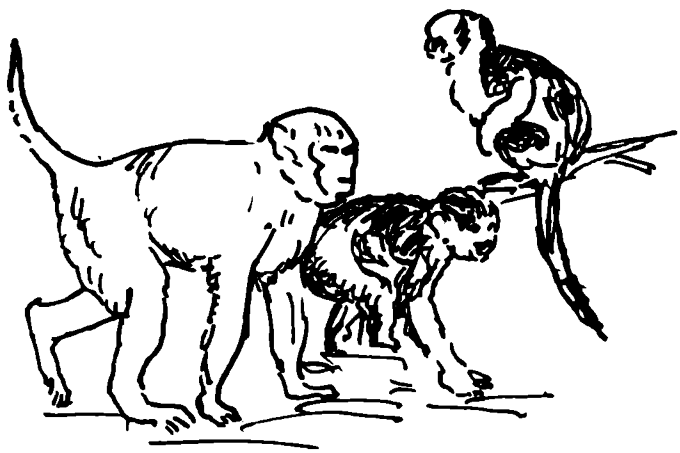
तब फिर सत्य बोल मैं कितना पाऊंगा सम्मान,
क्योंकि सत्य को श्रेष्ठ झूठ से कहते हैं विद्वान् ।

तभी उस बंदर राजा ने
प्रश्न उससे भी पूछा यह —

"मेरी राजसभा कैसी है, मैं कैसा राजा हूं ?"
कहा सत्यवादी ने—"आज्ञा हो तो मैं उत्तर दूं।
तुम जैसे बंदर हो वैसे ये सब भी हैं बंदर,
नहीं भलामानुष कोई भी भरी सभा के अंदर ।"

सत्यवादी की बातें सुन
गया राजा फौरन जल-भुन,
बंदरों से बोला — "इसको
बच कर निकल मत जाने दो ।
खबर इसकी जी-भर कर लो
खूब नाखूनों से नोचो ।"

दुष्टों के शासन में पाता सजा सत्यवादी है,
मजे उड़ाता वह जो हरदम मिथ्या का आदी है ।





दूध बेचनेवाली

दूध बेचनेवाली एक
सुंदर भोली-भाली नेक ।
घड़ा दूध का रखे सिर पर थी बाजार को जाती,
जाने क्या-क्या सोच रही थी मन में वह मदमाती ।

दूध बहुत अच्छा है उसका,
पैसा भी भरपूर मिलेगा ।
उससे वह कुछ मुर्गी लेगी,
मुर्गी अंडे-बच्चे देगी
वह उन बच्चों को बेचेगी,
जो कुछ कीमत उसे मिलेगी ।
उनसे वह साड़ी ले लेगी,
साड़ी उस पर खूब खिलेगी ।
जब वह उसे पहन निकलेगी,
परी नहीं, अप्सरा लगेगी ।
नौजवान सारे बस्ती के,
सुंदर भोले-भाले जी के ।
निशि-दिन उसके गुन गाएंगे,
शादी कर लेना चाहेंगे ।
तब वह उनसे मान करेगी,
नहीं किसी को कभी वरेगी ।
जो कोई प्रस्ताव करेगा,
'नहीं-नहीं' उत्तर पाएगा ।



'नहीं-नहीं' की बात सोच कर उसने शीश हिलाया,
सिर पर रखा घड़ा दूध का तभी भूमि पर आया ।

गिर कर फौरन फूट गया
उसका सपना टूट गया ।
मन मसोस रह गई बेचारी
भोली-भाली अबला नारी ।

बिना नींव के ही जो मन में ऊंचे महल बनाते,
इसी तरह से वे दुनिया में रह जाते पछताते ।

चोर और उसकी माता

एक पढ़नेवाला लड़का
बहुत ही चंचल-नटखट था,
पोथी लेकर घर से वह ।
जाता रोज मदरसा था

अपनी पोथी के थैले में चुरा-छिपा कर दाब,
एक रोज वह सहपाठी की लाया चुरा किताब ।
घर लाकर उसने वह पुस्तक अपनी मां को दे दी,
मां थी बड़ी लालची, उसने हाथ बढ़ा कर ले ली ।

हिम्मत उसकी बढ़ी, लगा वह चीजें रोज चुराने,
चुरा-छिपा कर चुपके-चुपके अपने घर पर लाने ।
होकर बड़ा बना वह पूरा पक्का डाकू-चोर,
लूट-मार करता फिरता था बस्ती में सब ओर ।
इकले-दुकले लोगों को तो देता था वह मार,
परेशान थे सब सुन-सुन कर उसके अत्याचार ।

आखिर एक रोज घर पर आ
उसे पुलिसवालों ने पकड़ा,
उसके ऊपर चला मुकदमा
और सुनाया गया फैसला ।
मिली सजा उसको फांसी की
मां भी पास खड़ी सुनती थी ।
लड़के ने जज से विनती की—
"मुझे आपने सज़ा गलत दी ।

अपराधी तो मेरी मां है, जिसकी मैं संतान;
इसने मुझे सिखाई चोरी बचपन में अनजान ।
जब मैं सहपाठी लड़कों की चीज चुरा लाता था,
तो दिल बेहद खुश हो जाता था मेरी माता का ।



इसी लिए पड़ गई तभी से यह चोरी की आदत,
होकर बड़े न छूट पाती है बचपन से पाली लत ।
मेरी माता मुझे न देती यदि उस समय बढ़ावा,
तो क्यों मुझे देखना पड़ता यह फांसी का तख्ता ।''
जो मां अपने बच्चों को है सीख न अच्छी देती
इसी तरह से वह दुनिया में सिर पर अपयश लेती ।

ज्योतिषी

एक ज्योतिषी किसी सड़क पर कुछ कागज फैला कर,
भाग्य बताते थे लोगों का ज्योतिष-गणित लगा कर,
अक्सर उनके आस-पास थी भीड़ बड़ी लग जाती,
आगे क्या होनेवाला है, सुनने को अकुलाती

एक रोज वह इसी तरह से
जबकि फलाफल बता रहे थे;

एक पड़ोसी उनका कोई दौड़ा-दौड़ा आया
"सारा घर जल गया तुम्हारा" — आते ही चिल्लाया।

ज्योतिषीजी उससे यह सुन
लगे रोने अपना सिर धुन।
जुड़ी थी जो जनता सारी
गई पड़ अचरज में भारी।

निकल भीड़ में से बाहर को आया बुड्ढा एक,
कहने लगा ज्योतिषीजी की ऐसी हालत देख —

"अरे तुम सदा दूसरों के
भाग्य की थे बातें करते,



किन्तु अपनी ही किस्मत का
तुम्हें था बिल्कुल नहीं पता ।
तुम्हारी बातों पर विश्वास
करे जो उसका सत्यानाश ।''

दुनिया के लोगों की किस्मत फिरते जो बतलाते,
वे खुद अपनी ही किस्मत का लेखा समझ न पाते ।

घोड़े और चोर

एक बार दो घोड़े थे
लदे-लदाए बोझे से ।
किसी राह पर जाते थे,
मस्ती में इठलाते थे ।
लदी एक के ऊपर थी
भारी रुपयों की थैली,
और दूसरे पर रखे
कई अन्न के बोरे थे ।

जिस घोड़े पर रुपये थे, था उसको बहुत अभिमान,
सोच रहा था कौन जगत् में है मुझसे धनवान !
बड़ी शान से टप-टप करता जाता था मुंहजोर
हरा-हरा दिखलाई देता था उसको सब ओर ।
किन्तु दूसरा धीरे-धीरे उठा रहा था पैर,
मुश्किल से बढ़ कदम-कदम पर मना रहा था खैर ।

इतने में कुछ चोरों ने आ
किया अचानक उन पर हमला ।
जिस पर रुपये लदे हुए थे
उसको पकड़ लिया चोरों ने ।

और लूट ले गए पीठ पर लदा हुआ सारा धन,
वह कराहता रहा देर तक कर अपना भारी मन ।
पर चोरों ने नजर न डाली उस घोड़े के ऊपर,
अन्न लदा होने से जिसको चलना भी था दूभर ।

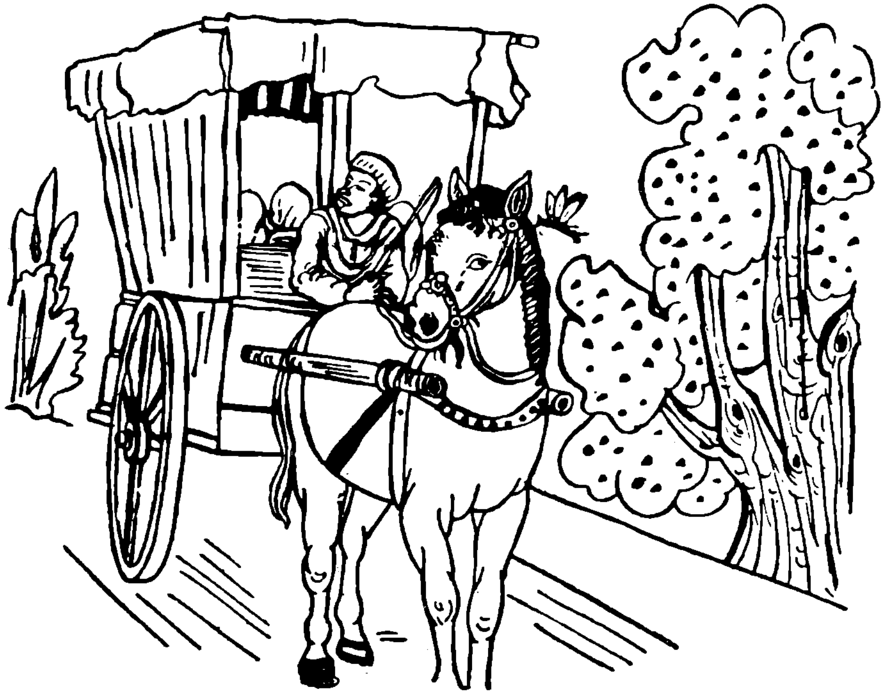


तभी अन्नवाले घोड़े ने
उस रुपये वाले घोड़े से

कहा — "तुम्हें था अपने धन के ऊपर बहुत घमंड,
इसीलिए चोरों ने शायद दिया तुम्हें यह दंड ।"
दुनिया में हर अभिमानी का सिर नीचा होता है,
जो बेमतलब बहुत अकड़ता, आखिर में रोता है ।

मच्छर और घोड़ा

एक मच्छर यों ही उड़ कर,
एक इक्के के लट्ठे पर ।
बैठ कर जाने लगा वहां,
कि इक्का था जा रहा जहां ।
लगा कहने घोड़े से यों —
''नहीं तू तेज रहा चल क्यों ?
खूब तेजी से बढ़ कर चल,
नहीं तो अपना डंक प्रबल ।
अभी मैं तेरी गरदन पर,
चुभाता हूं ऐसा कस कर ।
कि तू भी याद करे बरसों,
न जिसका घाव भरे बरसों ।''
इसे सुन कर घोड़ा बोला,
''अरे भोले मच्छर जा-जा ।
मुझे तेरी क्या परवाह है,
कि जब तक मालिक बैठा है ।



चलाता है वह जब-जैसे,

चला करता हूं मैं वैसे ।

चलूं कैसे, मत मुझे सिखा,

न अपनी झूठी शान दिखा ।"

बड़ी बात कहने लगते हैं छोटे मुंह वाले जब,
बड़े टाल देते हैं हंस कर उनकी वे बातें तब ।

गीदड़ और सारस

एक गीदड़ से सारस की
दोस्ती थी काफी गहरी ।
एक रोज दावत सारस की
गीदड़ ने अपने घर पर की ।
सारस बहुत हुआ खुश मन में
फूला नही समाया मन में ।

ठीक समय पर गीदड़ के घर सारस चल कर आया,
गीदड़ ने हंस कर आगे बढ़ उसको गले लगाया ।

फिर दोनों बैठे खाने को
प्रीति परस्पर दिखलाने को ।
गीदड़ ने थाली में परसी
पतली खीर दूध-चावल की,
और कहा सारस से— "आओ,
यह लो मित्र, पेट-भर खाओ ।"

पर सारस की चोंच नुकीली लम्बी, नाई की कैंची-सी ।
उस थाली में डूब न पाई खीर न बिल्कुल उसने खाई ।

वह भूखा ही उठ आया
पेट न उसका भर पाया ।

गीदड़ भी खा रहा साथ था, उसने जीभ निकाली,
और खीर की थाली सारी पोंछ, साफ कर डाली ।

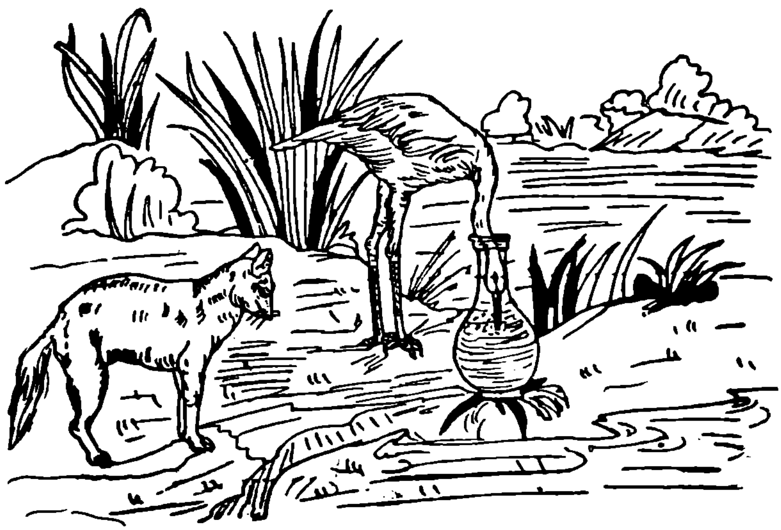
फिर उसने मुंहदेखी बातें
की भलमनसाहत के नाते —
"मैंने तुमको यहां बुला कर
आज कष्ट ही दिया, मित्रवर !

भोजन ठीक नहीं बन पाया शायद तुम्हें पसंद न आया ।
तुम इसलिए बिना कुछ खाए मुझसे पहले ही उठ आए ।"

सारस मौन रहा यह सुन कर
दिया नहीं उसने कुछ उत्तर ।

लेकिन सारस चला वहां से धन्यवाद देकर जब,
अपने चतुर मित्र गीदड़ से वह हंस कर बोला तब —

"परसों तुम मेरे घर आना
और शाम का भोजन खाना ।"
गीदड़ जब उसके घर आया
सारस आगे बढ़ कर आया ।
बड़े प्रेम से गले लगाया
आदर से लाकर बैठाया ।



चने सुराही में भर कर ला
बैठ गया वह वहीं पास आ ।

फिर यों कहने लगा — "चने ये काबुल से मंगवाए,
बहुत बड़ी कीमत दी मैंने तब मुझको मिल पाए ।

तुम हो मेरे मित्र पुराने
जाने-पहचाने सन्माने ।
तुम्हें नहीं ये अगर खिलाता,
तो मुझको कुछ स्वाद न आता ।"

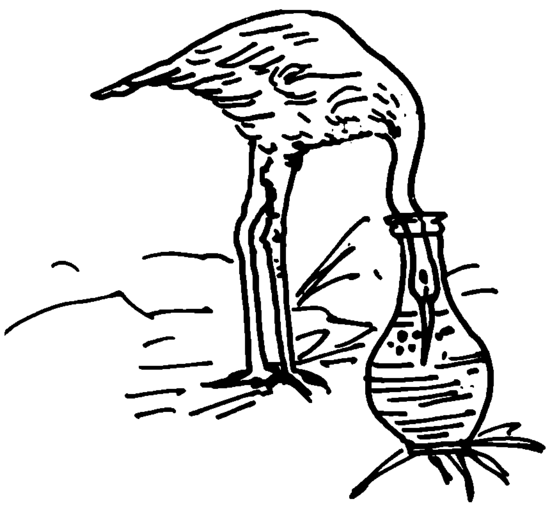
पर गीदड़ का मुंह न सुराही के भीतर जा पाया,
नहीं एक भी चना बेचारा किसी तरह खा पाया ।

दूर अलग वह बैठा जा
वैसा ही भूखा-प्यासा ।

सारस ने तब अपनी लम्बी चोंच सुराही में डाली,
और चनों से भरी सुराही सारी कर डाली खाली ।

गीदड़ रहा देखता बैठा
सारस से वह कहता भी क्या !

दुनिया में जो जिससे करता जैसा ही व्यवहार,
उससे पाता है बदले में वैसा ही व्यवहार ।



नांद का कुत्ता और बैल

कुत्ता एक नांद के भीतर
जाकर पड़ रहता था अक्सर ।
कोशिश अगर जानवर कोई
करता था भूसा खाने की,
था वह पास न आने देता
पकड़ कान था उसके लेता ।
गला फाड़ कर था चिल्लाता
भों-भों करके दूर भगाता ।
रोब जमा पशुओं पर सारे
लेटा रहता पांव पसारे ।

एक बैल ने सोचा मन में एक बार हिम्मत कर,
इस कुत्ते ने तो हम सबकी रखी है आफत कर ।
खुद कुछ खाता नहीं न हमको ही है खाने देता,
भूसे पर बैठा रहता है पास न जाने देता ।
नीचा क्यों न दिखाया जाए इस कुत्ते को चल कर,
जिससे फिर वह कभी न लेटे वहां नांद के अंदर ।
सोच-विचार गया वह सीधा चला नांद के पास,
और बढ़ाया मुंह जैसे ही, उठ कुत्ता बदमाश ।

तन कर सीधा गया खड़ा हो
'भों-भों, कर उससे लड़ने को ।
तभी बैल ने भी झुंझला कर
उठा लिया उसको सींगों पर;

और घुमा कर गरदन उसको पटक दिया धरती पर,
मरा दर्द के मारा कुत्ता, भागा कें-कें-कें कर ।



फिर वह कभी नांद के अंदर
नहीं भूल से बैठा आकर ।

व्यर्थ दूसरों पर जो अपना झूठा रोब जमाता,
एक रोज वह इसी तरह है मार भगाया जाता ।

भेड़ और चरवाहा

एक भेड़ अपने रेवड़ से बिछड़ अलग हो चल दी,
उसे देख गुस्से की सीमा रही न चरवाहे की ।

उसने एक उठा कर पत्थर
ऐसा मारा उसके सिर पर ।

जिससे उसका एक सींग ही गया अचानक टूट,
हुई खैरियत एक आंख भी कहीं गई न उसकी फूट ।

मन में बहुत डरा चरवाहा,
अब भेड़ों के मालिक को जा ।
क्या जवाब देगा वह इसका,
पास भेड़ के घबरा कर आ ।

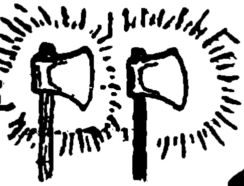
कहने लगा कि "तेरी मुझ पर होगी बहुत इनायत,
अगर न मालिक से तू मेरी जाकर करे शिकायत ।"

कहा भेड़ ने — "मैं न कहूंगी,
तो क्या टूटा हुआ सींग भी
मालिक से कुछ भी न कहेगा,
घायल कैसे मौन रहेगा ?"



हत्या का तो खून गवाही देता अपने-आप,
परदा डाल कहीं छिपता है जग में कोई पाप ।

सोने चांदी और लोहे की कुल्हाड़ी





एक लकड़हारा जंगल में एक नदी के तट पर,
काट रहा था डाल कुल्हाड़ी से दरख्त पर चढ़ कर ।

तभी हाथ से छूट कुल्हाड़ी
बीच धार में गिरी नदी की ।

वह बेचारा उतर पेड़ से नदी किनारे आकर
रहा देखता गहरे जल में लेकिन क्या सकता कर ।

मन में बहुत दुखी वह था,
रोज़ी का साधन जो था,
वह भी चला गया उसका,
हे ईश्वर, अब क्या होगा ?

उसके दुख को देख देवता जल के तभी नदी से
एक कुल्हाड़ी सोने की ले जल से बाहर निकले;

और पूछने लगे लकड़हारे से — "देखो,
अगर कुल्हाड़ी यही तुम्हारी हो तो ले लो ।"

कहा लकड़हारे ने — "मेरी
नहीं कुल्हाड़ी यह सोने की ।"

तभी देवता ने डुबकी मारी फिर जल में,
एक कुल्हाड़ी चांदी की ले आए पल में;

और पूछने लगे लकड़हारे से — "देखो
अगर कुल्हाड़ी यही तुम्हारी हो तो ले लो ।"

कहा लकड़हारे ने — "मेरी
नहीं कुल्हाड़ी यह चांदी की ।"
तभी देवता ने डुबकी फिर मारी जल में,
एक कुल्हाड़ी लोहे की ले आए पल में;
और पूछने लगे लकड़हारे से — "देखो,
अगर कुल्हाड़ी यही तुम्हारी हो तो ले लो ।"

कहा लकड़हारे ने — "मेरी
यही कुल्हाड़ी है लोहे की ।"

बेहद खुश हो गए देवता उसकी सचाई पर,
और कुल्हाड़ी सोने, चांदी, लोहे की सब देकर;

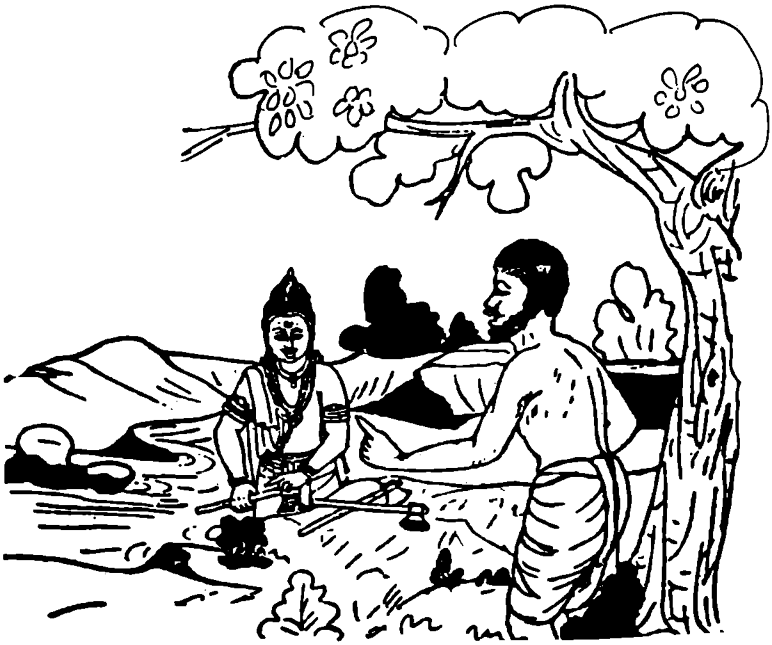
उसे वहां से विदा किया, फिर
कूद गए वे जल के अंदर ।
लकड़हारा जब लौटा घर,
गांव के सारे नारी-नर
दौड़ते आए उसके घर,
पूछते थे अचरज में भर
"कुल्हाड़ी सोने-चांदी की
तुझे ये कैसे-कहां मिलीं ?"

उन्हें लकड़हारे ने हंस कर सारी कथा सुनाई ।
कैसे मिले देवता जल के और कुल्हाड़ी पाई ।
एक गांववाले ने सुन कर बात लकड़हारे की,
मन में सोचा नदी-किनारे जाऊंगा कल मैं भी ।

क्यों न देवता से जल के जा
मैं भी लाभ उठाऊं ऐसा ?

और गया वह भी जंगल में उसी नदी के तट पर,
लगा काटने डाल कुल्हाड़ी से दरख्त पर चढ़ कर ।

जान-बूझ कर उठा कुल्हाड़ी बीच धार में फेंकी,
उसी तरह से डूब गई वह पानी में गिरते ही ।
वह भी रोया जोर-जोर से आंसू बहा-बहा कर,
हे परमेश्वर ! अब क्या होगा, मैं तो जाऊंगा मर ।
उसका भी दुख देख देवता जल के द्रवित हुए,
एक कुल्हाड़ी सोने की ले जल से बाहर निकले;



और पूछने लगे गांववाले से — "देखो,
अगर कुल्हाड़ी यही तुम्हारी हो तो ले लो ।"

कहा गांववाले ने — "मेरी
यही कुल्हाड़ी है सोने की ।"
और उसे हथिया लेने के
लिए बढ़ा वह हाथ पसारे ।
समझ गए जल-देवता
उसकी सारी धूर्तता ।
और बिना कुछ दिए उसे वह
कूद गए जल के अंदर तब ।

बहुत देर तक आस लगाए तट पर बैठा देखता
रहा गांववाला, पर वापस लौट न आए देवता ।

गई कुल्हाड़ी उसकी वह भी,
जो उसने जल में फेंकी थी ।
मिली नहीं सोने-चांदी की
गई पास से लोहे की भी ।

ठगी, झूठ, छल के बल पर है जो व्यापार चलाता ।
उसकी पूंजी भी जाती है, हाथ नहीं कुछ आता ।

शेर और चूहा

किसी घने जंगल के अंदर
अपनी बड़ी गुफा से बाहर;
एक शेर सो रहा पड़ा था,
मुंह था उसका बहुत बड़ा-सा ।
पास किसी बिल में से चूहा
निकल वहां यों ही पहुंचा आ;
सोते हुए शेर पर चढ़ कर,
लगा रेंगने कान-नाक पर ।

उसकी हरकत से नाखुश हो शेर नींद से जागा,
चूहा उतर नाक से फौरन जान बचा कर भागा ।



किन्तु भाग जाने से पहले,
चूहे को वनराज सिंह ने;
दाब लिया पंजे में अपने,
और लगा उससे यों कहने —
"ऐ नादान जरा-से चूहे,
तेरी इतनी हिम्मत, तूने;
है सोते से मुझे जगाया,
अब मैं तुझको जाऊंगा खा ।"

चूहा बहुत विनय करके तब कहने लगा पुकार —
"हे वन के पशुओं के राजा क्षमा करो इस बार ।

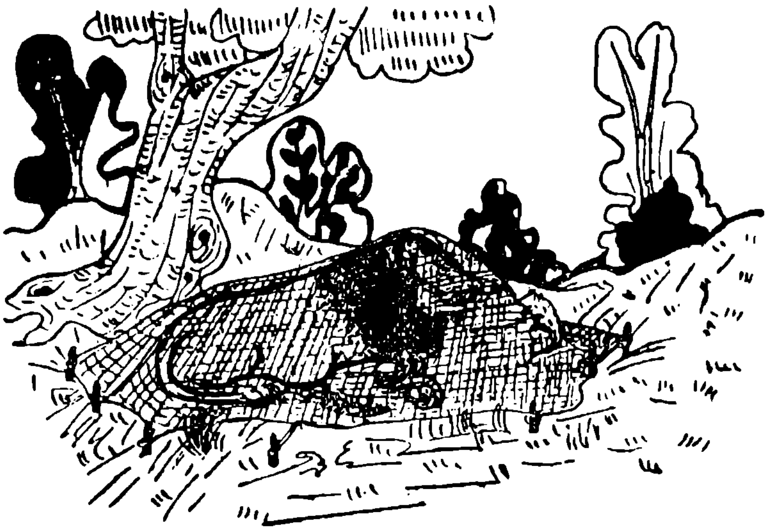
भली हुई, मैं अपराधी हूं, अगर छोड़ दो जान,
तो मैं जीते जी न तुम्हारा भूलूंगा एहसान ।

बदला इस उपकार का
कभी तुम्हारे काम आ ।
मैं जरूर दूंगा तुम्हें ।
मित्र मान लूंगा तुम्हें ।''
चूहे की बात सुन कर
असर हुआ कुछ उसके मन पर ।
भूल गया वह अपना गुस्सा
उसे अचानक हंसी गई आ ।
छोड़ दिया उसने चूहे को
और गया फिर वैसे ही सो ।

बहुत दिनों के बाद एक दिन उस जंगल के अंदर,
घुस आया था एक शिकारी, सभी जानवर डर कर;
इधर-उधर छिपते-फिरते थे बेचारे घबरा कर,
कहां भाग जाते जंगल से अपनी जान बचा कर !
चतुर शिकारी ने फैलाया जंगल में वह जाल,
जिसमें जा फंस गया एकाएक वही शेर विकराल ।
उछल-कूद की बेहद लेकिन टूट न पाए फंद,
वह परवश लाचार रहा पड़ उसी जाल में बंद ।

चूहे को जब ज्ञात हुआ यह,
फौरन ही बिल से निकला वह;
पास शेर के चल कर आया,
धीरज दे उसको समझाया —
''सोच न अपने मन में लाना
आ पहुंचा मैं, मत घबराना ।
मैं यह जाल काट डालूंगा
और तुम्हें वह अवसर दूंगा,

जिससे तुम हो मुक्त भगोगे,
नहीं किसी के हाथ लगोगे।"
उसने अपने तेज़-नुकीले
दांतों से फिर धीरे-धीरे



जाल काट डाला वह सारा,
जैसे मछली काटे धारा।
शेर जाल ढीला पड़ते ही
भरकर भागा छ़लांग चौकड़ी।

उसी समय यह खयाल अचानक उसके मन में आया,
चूहे पर एहसान किए का उसने यह फल पाया।
अपने से छोटों पर है जो दया-भाव दिखलाता,
वह संकट में इसी तरह है अपना रक्षक पाता।

कछुआ और खरहा

एक बार खरहे ने कछुए की यों हंसी बनाई,
तेरी चाल बहुत धीमी है, मेरे भोंदू भाई ।
सुन खरहे की बात न कछुआ पहले तो कुछ बोला,
पर जब और हंसी की उसने — "वा रे वा बम भोला ।"
तब कछुए ने कहा — "हवा से बातें करनेवाले,
हिम्मत हो तो आ, चलने की बाज़ी अभी लगा ले ।
पेड़ सामने बरगद का वह खड़ा हुआ है दूर,
पहुंच सके जो उस तक पहले, बोल तुझे मंजूर ?
दुनिया में मानी जाएगी तेज उसी की चाल,
देखूं तेरी चाल, व्यर्थ क्यों बजा रहा है गाल ।"
कछुए की सुन बात हंसा मन-ही-मन वह खरहा,
जीतूंगा यह शर्त उसे इसका विश्वास बड़ा था ।

फिर वे दोनों चले वहा से
जीत-हार की शर्त लगा के ।

कछुआ धीरे-धीरे गिन-गिन अपने पांव बढ़ाता,
भर छलांग पल-भर में खरहा यह जाता वह जाता ।
खरहा जा कुछ दूर गया रुक, मुड़ कर लगा देखने,
कछुआ अभी बहुत पीछे है मन में लगा सोचने ।
क्यों कुछ पल विश्राम न ले ले जब तक कछुआ आए,
झोंके भी आ रहे वहां थे शीतल मंद हवा के ।

चारों हाथ-पांव फैला कर
लेट गया वह हरी घास पर ।

और हवा ठंडी लगने से उसको नींद गई आ,
लगा देखने वह सुख-सपना हरी दूब चरने का ।

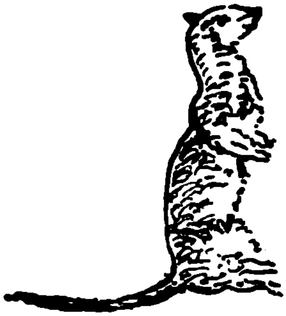


पांवों की तेजी के बल पर
धीरे-धीरे-धीरे चल कर,
तभी वहां पर आया कछुआ
जहां पड़ा सोता था खरहा ।

बिना रुके पल-भर भी आगे बढ़ता चला गया वह,
उन्नति के शिखरों पर ऊंचा चढ़ता चला गया वह ।
चलते-चलते, चलते-चलते पहुंच गया बरगद तक,
यद्यपि पांव दर्द करते थे, वह था गया बहुत थक ।

उधर नींद से खरहा जागा
उठते ही घबरा कर भागा ।
अपनी सोने की आदत को
कोस रहा था मन-ही-मन जो ।
तेज दौड़ बरगद तक आया
पड़ा वहां कछुए को पाया ।
बहुत हुआ तब वह शरमिन्दा
बदी शर्त वह हार गया था ।

वही लोग अपने निश्चय को पूरा कर दिखलाते,
लगी लगन से धीरे-धीरे जो कुछ करते जाते ।
पर दूसरों की हंसी बना कर जो हैं खुद सो जाते,
वे रह जाते दूर लक्ष्य से, पीछे से पछताते ।



चूहों और नेवलों की लड़ाई

एक बार चूहों-नेवलों में छिड़ी लड़ाई भारी,
दोनों दल की सेनाओं में मारकाट थी जारी ।
कई रोज़ तक हुई लड़ाई, पर चूहे ही हारे,
ताकतवर नेवलों के आगे क्या करते बेचारे ।
आखिरकार सभी चूहों ने एक सभा की भारी,
और समस्या हार-जीत की समझी-बूझी सारी ।
किया गया निश्चय "कोई है नेता नहीं हमारा,
इसीलिए रण में नेवलों से चूहों का दल हारा ।
हर सेना के लिए चाहिए कुछ नेता सरदार
जिनके बिना नहीं है सम्भव लड़ना किसी प्रकार ।"
चूहों में से फिर जो भी थे महावीर बलवान,
बड़े-बड़े लम्बे थे जिनके हाथ-पांव मुंह-कान ।

चुने गए चूहों के नेता
परम साहसी विश्वविजेता ।

फिर सबने सोचा, पर नेता जब रण में जाएंगे,
चूहों की सेना में कैसे पहचाने जाएंगे ।
उन सब नेताओं ने तिनके-घास-फूस मंगवा कर,
सुंदर छत्र बना कर रखे अपने-अपने सिरों पर ।

जिनसे उनको सब पहचानें
युद्धभूमि में नेता मानें ।

हिम्मत करके सब चूहों ने. फिर दी छेड़ लड़ाई,
किन्तु लड़ाई अब की छेड़ी अधिक नहीं चल पाई ।



पल-भर के भी लिए न पाए टिक नेवलों के आगे,
तितर-बितर होकर सब चूहे इधर-उधर को भागे ।

कई गए कुचल-दब कर मर
कई उठ न सके फिर गिर कर ।
कई छिपे बिलों के अंदर
जैसे-तैसे प्राण बचा कर ।

नेवलों ने भर पेट मार कर खाया उनको खूब,
जैसे बकरी चर जाती है नन्हीं-नन्हीं दूब ।
नेता अपने को सेना से अलग मान लेते जब,
दुश्मन आसानी से रण में उन्हें हरा देते तब ।

शेर और उसके तीन मुसाहिब

एक शेर के तीन मुसाहिब गधा, बाघ, गीदड़ थे,
आसपास सेवा में उसकी लगे सदा रहते थे ।
शेर एक दिन बड़ी शान से बैठा पांव पसार,
कई और पशु आसपास, था लगा हुआ दरबार ।

कहा गधे से शेर ने —
''मेरे बड़े शरीर से
कैसी बदबू आ रही !
नाक सड़ी-सी जा रही ।''

बोला गधा मिला हां-में-हां ''गंध बुरी आती है
हां, हजूर, सचमुच मेरी तो नाक सड़ी जाती है ।''

उसकी इस मूर्खता पर
शेर गया गुस्से में भर,
टूट पड़ा फौरन उस पर
और दिए दो टुकड़े कर ।

फिर वह कहने लगा बाघ से ''अच्छा, तुम बतलाओ,
क्या मेरी इस बड़ी देह से बदबू आती तुमको ?''
बोला ''नहीं, मुझको तो कोई गंध न आती,
गधा बड़ा मूर्ख था उसकी नाक सड़ी थी जाती ।''

सुन उसका यह झूठ सरासर
शेर गया फिर गुस्से में भर,

वहीं मार डाला उसको भी
यही सज़ा थी साफ झूठ की ।
कहा शेर ने फिर गीदड़ से —
"अच्छा, अब तू ही बतला दे ।
क्या मेरे शरीर से आती
बुरी गंध है नाक सड़ाती ?"

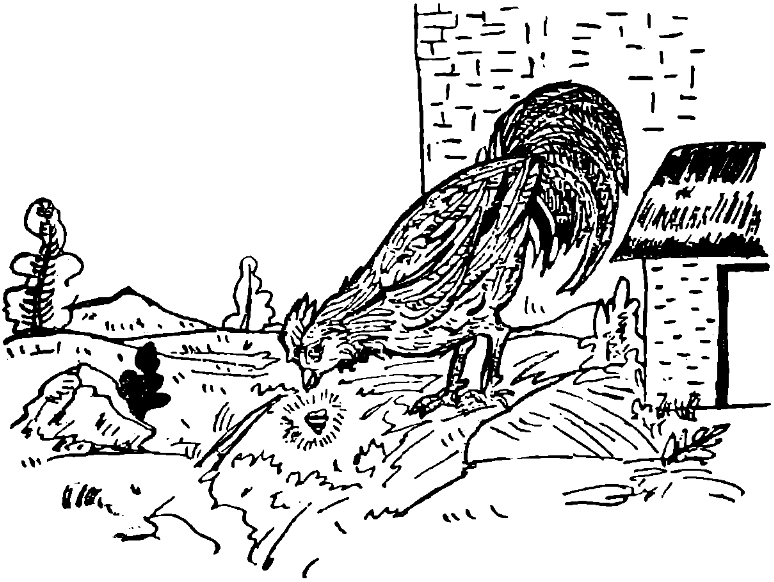


गीदड़ बोला "हे वनराज,
नाक बंद है मेरी आज;
क्योंकि ज़ोर का हुआ जुकाम,
था बुखार भी कुछ कल शाम ।
इसलिए न कह सकता कुछ मैं भी
गंध बुरी आती या अच्छी ।"

शेर शांत हो रहा इसे सुन; होते जो होशियार,
अपनी राय दिया करते हैं काफी सोच-विचार ।

मुर्गा और रत्न

कभी था कहीं एक मुर्गा
किसी घूरे पर घूम रहा,
भूख थी उसको खूब लगी
न मुंह में पहुंची थी किनकी ।



कूड़े को झकझोर चोंच से
पंजों से छितरा कर,
वह खाने को ढूंढ़ रहा था
गरदन घुमा-घुमा कर ।

आखिर बहुत ढूंढ़ने पर
उसको एक रत्न सुंदर,
कूड़े में मिल गया पड़ा
कोहनूर का-सा टुकड़ा ।

उसे देख कर मुर्गा दुख में कहने लगा पुकार—
"होगा तू अनमोल रत्न पर मुझे मिला बेकार ।
तेरी सुंदरता से मेरा पेट न पाएगा भर ।
मैं तो जिंदा रह सकता बस दाना-किनकी पाकर ।"

शेर, बाघ और गीदड़

एक शेर होकर बीमार
पड़ा गुफा में था लाचार,
दुखता-सा था सकल शरीर
वह रहता था विकल अधीर ।

उसे देखने बीमारी में सभी जानवर आए,
सब चिंतित थे उनका राजा मर ही कहीं न जाए ।

गीदड़ सिर्फ एक ऐसा था
जो उसको न देखने आया ।
बाघ एक दिन मौका पाकर
लगा शेर से कहने आकर —

''बीमारी में तुम्हें देखने को आए पशु सारे,
किन्तु न अब तक एक रोज गीदड़राज पधारे ।

वह घमंड में होकर पागल
नहीं समझता कुछ तेरा बल ।''

बात न पूरी हो पाई थी अभी बाघ की जब तक,
गीदड़ भी आ गया अचानक पास शेर के तब तक ।
उसे देखते ही आंखें कर लाल शेर गुर्राया —
''तेरी यह मजाल, तू अब तक नहीं देखने आया ।''

गीदड़ लगा कांपने थर-थर
बोला मगर संभल कर —



"नहीं दिखावे की आदत है
बिल्कुल मेरे अंदर ।

और जानवर अब तक आकर करते रहे दिखावा,
अपनी चिकनी-चुपड़ी बातों से दे तुझे भुलावा ।
पर मैं भूख-प्यासा रह कर जंगल-जंगल भटका,
और पूछ कर आया हूं मैं एक दवा का नुस्खा ।
इसीलिए हो गई देर कुछ मुझे यहां आने में
मैं सच्चा सेवक हूं हाजिर, है सिर हरजाने में ।

कहा शेर ने "अच्छा आओ
वह नुस्खा मुझको बतलाओ
जिससे मैं अच्छा हो जाऊं ।
और राज का काज चलाऊं ।
मैं तो था यह बात समझता
तू बेकार नहीं रुक सकता ।"
गीदड़ कहने लगा — "हजूर
लाभ करेगी दवा जरूर ।

और दूर भी कहीं नहीं वह
मिल सकती है अभी यहीं वह ।

"ताजे मारे हुए बाघ की अगर खींच कर खाल
नरम-नरम थोड़ी-सी चरबी रख लें आप निकाल,
और उसे मल लें शरीर में रोज सवेरे-शाम
तो दो दिन में नहीं रहेगा कहीं दर्द का नाम ।"

शेर यह सुन कर उछल पड़ा
बाघ की गरदन को पकड़ा
और कस कर ऐसा मोड़ा
मरा जब तक न उसे छोड़ा ।
खींच कर खाल अलग कर दी
उठा रख ली चरबी-चरबी ।

चुगलखोर हैं जो, अफसर से गलत शिकायत करते
उनका हाल यही होता है इसी तरह हैं मरते ।



ईसप की नीति कथाएं आज भी दुनिया भर में लोकप्रिय हैं। पंचतंत्र की कहानियों की भांति इन कहानियों के भी पात्र पशु–पक्षी हैं। निरंकार देव सेवक द्वारा छंदबद्ध इन कहानियों को प्रकाशन विभाग ने दो भागों में प्रकाशित किया है।

Aesop's Fables are populer even today. These stories are interesting besides imparting moral education. Well known children's writer Nirankar Dev Sevak had rendered these fables into poetic form.

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

मूल्य : 45 रुपये
ISBN : 81-230-0702-7

